चन्दामामा
मार्च १९८८
2.50 RS

पुरस्कार जीतनेवाले स्पर्धकों को 'चन्दामामा' की बधाइयाँ !

१

शुचि शर्मा,
1705 सोहन गंज, सब्जी मंडी,
दिल्ली

I Prize

प्रशान्त भास्कर राऊत,
बाबाजी की चाल, डा, सर्वेपल्ली
राधाकृष्णन मार्ग,
अंधेरी (पूर्व), बंबई-६९

II Prize

केदार नाथ,
सीयाराम प्रभातीलाल, दीन बाजार,
जलपाईगुड़ी

III Prize

चन्दामामा

मार्च 1988

★

विषय-सूची

★

एक प्रति : २-५०

वार्षिक चन्दा : ३०-००

No share prices,
no political fortunes, yet...

Over 40% of Heritage readers are professionals or executives, 61% from households with a professional / executive as the chief wage earner. Half hold a postgraduate degree or a professional diploma.

It's an unusual magazine. It has a vision for today and tomorrow.
It features ancient cities and contemporary fiction, culture and scientific developments, instead of filmstar interviews and political gossip. And it has found a growing readership, an IMRB survey reveals. Professionals, executives and their families are reading The Heritage in depth – 40% from cover to cover, 42% more than half the magazine.
More than 80% of The Heritage readers are reading an issue more than once.
And over 90% are slowly building their own Heritage collection.
Isn't it time you discovered why?

CMR-2155

So much in store, month after month.

के नये सैट में पढ़िए
छः नए रोचक, हास्यप्रद, शिक्षाप्रद व सनसनीखेज़ कॉमिक्स

नागराज का इंसाफ
शीशे का महल
एक से बढ़कर एक
झगड़ा एक रोटी का
बात का धनी
अनोखी ट्रेन डकैती
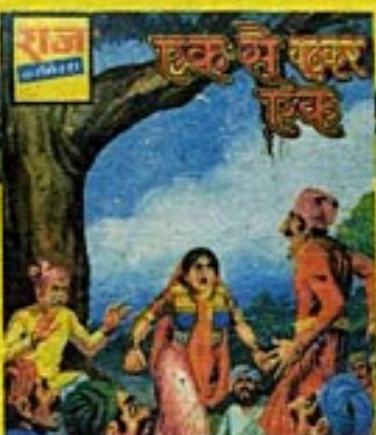
आज ही अपने पुस्तक विक्रेता से अपनी प्रति सुरक्षित कराएँ।

कॉमिक्स के अच्छे लेखक व आर्टिस्ट सम्पर्क करें।

प्रकाशक: राजा पॉकेट बुक्स १७/३६, शक्तिनगर, दिल्ली-११०००७

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

प्रा. मनोज दास द्वारा लिखित हमारे धारावाहिक बाल-उपन्यास के नायक का वास्तव में पूरा नाम है विनोद जयराज। कभी उसका उल्लेख हम जयराज नाम से करते हैं, तो कभी विनोद नाम से। पाठक समझ लें कि विनोद और जयराज एक ही व्यक्ति है। पिछली तीन संख्याओं में ये दोनों नाम आये हैं।

अमर वाणी

मृद्घट इव सुखभेद्यो, दुःसंधानश्च दुर्जनो भवति ।
सुजनस्तु कनकघटवद्, दुर्भेद्यश्चाशुसंधेयः ॥

[मिट्टी का घड़ा आसानी से टूट जाता है। परंतु इसके बाद उसे जोड़ना असंभव है। स्वर्ण-पात्र सहज टूटता नहीं, पर यदि टूट जाए तो उसे आसानी से जोड़ा जा सकता है। इसी तरह दुर्जनों के मनमुटाव खतम नहीं होते। सज्जनों के झगड़े शीघ्र ही मिट जाते हैं।]

वर्ष : ४०   मार्च १९८८   अंक : ७

एक प्रति : २-५० :: वार्षिक चन्दा : ३०-००
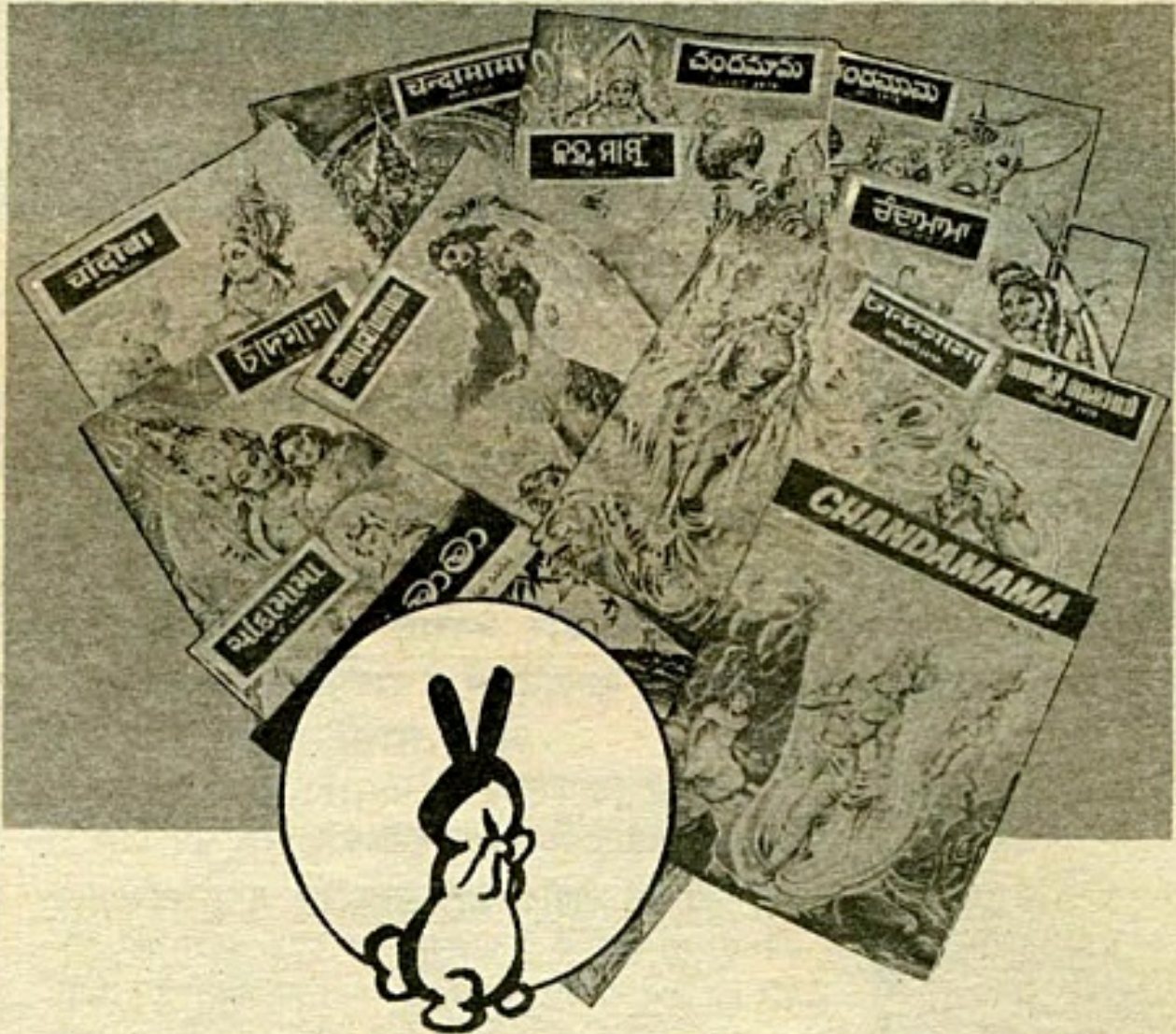
CHANDAMAMA

'चन्दामामा' के संवाद

अंतरिक्ष में नया प्रतिमान

सोवियत रूस के ४२ वर्ष आयुवाले अंतरिक्ष यात्री रोमानेनको ने लगभग २३६ दिन अंतरिक्ष में रहकर एक नया प्रतिमान स्थापित किया है। उन्होंने इन दिनों में अंतरिक्ष में अनेक अनुसंधान किये हैं।

भूगर्भ में स्थित द्वारका नगरी

पुराणों में बताया गया है कि कृष्ण के अवतार की समाप्ति पर उनके द्वारा निर्मित द्वारका नगरी समुद्र के गर्भ में विलीन हो गयी। आज ये प्रमाण उपलब्ध हो रहे हैं कि लगभग ६००० वर्ष पहले सौराष्ट का तटवर्ती एक नगर समुद्र में डूबा गया था।

आर्यों ने आक्रमण नहीं किया था।

यह बात सब को मालूम है कि आर्यों के आक्रमण के कारण भारत की हरप्पा की सभ्यता का अंत हो गया। परंतु सुप्रसिद्ध इतिहासवेत्ता डॉ. भगवान सिंह ने इसे ग़लत सिद्ध किया है। अनेक आधारों के साथ वे अत्यन्त दृढतापूर्वक बताते हैं कि आर्यों की सभ्यता तथा हरप्पा की सभ्यता दोनों प्रायः समान हैं।

अन्यन्त लघु कुरान

मुहम्मद कमाल हुसेन के परिवार में २.०×२.६ सें. में परिमाण की हस्तलिखित कुरान को प्रति ताबीज के रूप में धारण करने की प्रथा अभी अभी तक दिखाई दी। यही दुनिया का सबसे छोटी आकृति का कुरान माना जाता है। दो मिलियन डालर मूल्य का यह लघु कुरान इस समय दुबाय में सुरक्षित रखा गया है।

हंसक और डिंभक

सा ल्व देश के राजा ब्रह्मदत्त के बहुत समय तक कोई संतान नहीं पैदा हुई। इस पर एक दिन कुलगुरु ने राजा को समझाकर कहा—"राजन्, हमारे राज्य की सारी प्रजा आपकी संतान ही तो है। उन में से किसी सुयोग्य व्यक्ति को चुनकर उसे अपना उत्तराधिकारी बनाना सर्वथा उचित होगा।"

ब्रह्मदत्त को यह सुझाव पसंद नहीं आया। उन्होंने कड़ी तपस्या कर शिवजी को प्रसन्न कर लिया और उनसे संतानप्राप्ति का वरदान पा लिया। कुछ समय बाद राजा के हिंसक और डिंभक नाम के दो पुत्र पैदा हुए। गुरु ने राजा को सलाह दी—"इन बालकों को बड़ी निष्ठा के साथ सारी विद्याएँ सिखाकर उन्हें चरित्रवान् बनाया जाए और उनका पालन-पोषण न्यायोचित ढंग से हो।"

परंतु बरसों बाद राजा के घर संतान आई थी, इस लिए वे उन्हें बहुत ज्यादा लाड़-प्यार से पालना चाहते थे। इसी कारण हंसक और डिंभक बहुत उद्दण्ड बन गये और उन्होंने जरासंध को अपना मित्र बना लिया। उन्होंने कड़ी तपस्या की और ब्रह्मा से वरदान प्राप्त किया कि युद्ध में कोई भी उन्हें पराजित न कर सकें। वरदान के बल पर उन्होंने संत सज्जनों को सताना शुरू किया। उनमें यह अहंकार पैदा हुआ कि उनसे अधिक बलवान दुनिया में कोई नहीं है। उन्होंने अपने पिता द्वारा राजसूय यज्ञ संपन्न कराया तथा अन्य राजाओं के पास आदेश भेज दिया कि वे शुल्क भेजते रहे। यहाँ तक कि द्वारका के राजा श्रीकृष्ण के पास भी यही आदेश भेजा गया।

उन के अत्याचारों से तंग आकर द्वारकाधीश श्रीकृष्ण ने उनका अंत करने का एक उपाय सोचा। उन्होंने गुप्त रूप से हंसक को बन्दी बनाया और ख़बर फैला दी कि वह मर गया है। यह समाचार डिंभक के पास पहुँचा। हंसक के वियोग से अतीव दुखी होकर डिंभक ने यमुना नदी में कूद कर अपने प्राणों को छोड़ दिया। डिंभक की मौत का समाचार पाकर हंसक ने हठात् आत्महत्या कर ली।

कुछ समय उपरान्त कुलगुरु राजा के दर्शन करने पधारे। उन्होंने समझाया—"राजन्, संतान होने मात्र से प्रसन्न नहीं होना चाहिए। उनको उत्तम शिक्षा देकर अच्छे रास्ते पर लानेकी ज़िम्मेदारी भी माता-पिता ही की है। अपने उत्तरदायित्व की उपेक्षा करने का फल ऐसा ही होता है।"

राजा ब्रह्मदत्त अपनी असावधानी पर बहुत पछताये।

सपने का सौदा

अवन्तीपुर राज्य के किसी गाँव में एक युवक रहता था। उसका अपना कोई न था, और पढ़ाई लिखाई एवं काम काज में भी वह एकदम कच्चा था। सब लोग उसको 'अयोग्य' नाम से पुकारा करते थे।

उसी गाँव में एक शिवाला था। उस शिवाले में पूजा-अर्चना के लिए दूर दूर से आनेवाले साधु-सन्यासियों की वह खूब सेवा करता था। उसके मन में बचपन से ही अद्‌भुत शक्तियों को प्राप्त करने की प्रबल कामना थी।

एक बार एक हठयोगी जो हिमालय में निवास करते थे भ्रमण करते हुए 'अयोग्य' के गाँव में आ पहुँचे। वे केवल वयोवृद्ध ही नहीं बल्कि अस्वस्थ एवं दुर्बल भी थे। 'अयोग्य' को उनके प्रति बड़ी श्रद्धा हुई और उसने उनकी बड़ी सेवा सुश्रूषा की और धीरे-धीरे वह उन योगी का विश्वासपात्र भी बन गया।

कुछ दिन बीत गए। योगी ने यह अनुभव किया कि अब उनकी मृत्यु निकट आ गई है। उन्होंने 'अयोग्य' से कहा—"बेटा, मैं तेरी इच्छा जानता हूँ। आज तक तूने मेरी बहुत सेवा की है, इसके बदले में मैं भी तेरा उचित उपकार करूँगा।" यह कहकर योगी ने कुछ एक मंत्र पढ़ते हुए उसके सिर पर हाथ रखकर कहा—"सुनो, आज से तुम जो भी सपना देखोगे वह सच निकलेगा। लेकिन उसके द्वारा तुम्हारा हित या अहित तुम्हारी अपनी क़िस्मत पर निर्भर करेगा।"

इसके बाद उन हठयोगी का देहान्त हो गया। 'अयोग्य' ने उनकी अंत्येष्टि क्रिया संपन्न की और अपना भाग्य आज़माने के विचार से वह राजधानी अवन्तीपुर के लिए चल पड़ा। वहाँ पहुँचकर वह नगर की सीमा पर स्थित एक सराय में ठहर गया

इस सराय में अनेकों यात्री ठहरे हुए थे। वे

दीपचंद बैद

लोग उस देश के राजा शिववर्मा की बड़ी प्रशंसा कर रहे थे। एक ने कहा—"ये राजा दानशीलता में शिवि के बराबर हैं।" तो दूसरे ने कहा—"हाँ, साहस और पराक्रम में तो महाराज भीष्म के बराबर हैं।"

इस संवाद को सुनकर अयोग्य के मन में यह विचार आया कि यदि ऐसे राजा का आश्रय प्राप्त हो जाए तो सारी ज़िन्दगी बड़े आराम से बिताई जा सकती है। यही सब सोच विचार करते करते उसकी आँख लग गई। और उसने एक सपना देखा। आधीरात के समय राजा शिववर्मा अपने हाथ में तलवार लिए हुए अकेले राजपथ पर विचर रहे हैं। तभी एक वृद्ध ने इशारे से उन्हें अपने समीप बुलाया।

राजा उस वृद्ध के पीछे चल पड़े। चलते चलते वे एक विश्राम गृह में पहुँचे। वहाँ पहुँचकर राजा ने चारों ओर अपनी निगाह दौड़ाई, किन्तु वह वृद्ध इस बीच वहाँ से अदृश्य हो चुका था। इसके तुरन्त बाद वहाँ एक बड़े ज़ोर का चक्रवात आया जिसने राजा शिववर्मा को पृथ्वीतल से ताड़ वृक्ष की ऊँचाई जितना ऊपर उठाकर दूर फेंक दिया। किन्तु सौभाग्य से राजा पास के तालाब में गिरे और उनके प्राण बच गए।

दूसरे दिन सवेरे ही अयोग्य ने राजा शिववर्मा के पास पहुँचकर उनके दर्शन करके अपना परिचय देते हुए उन्हें अपने सपने का सारा वृत्तान्त कह सुनाया।

अयोग्य की सारी बातें सावधानी से सुनने के बाद राजा मुस्कराते हुए उसको सम्बोधित करके बोले—"ओ लड़के, तुम अपना पेट भरने के लिए इस तरह झूठ का सहारा क्यों लेते हो?" ऐसा कहकर उन्होंने उसे कुछ सिक्के देकर वापस भेज दिया।

अयोग्य निराश होकर वापस सराय में लौट आया। किन्तु दूसरे दिन ही राजा ने उसे अपने पास बुला भेजा और बड़े प्यार से उसकी पीठ थपथपाते हुए बोले—"कल जो तुमने बात कही थी, वह रात को सच निकली। यह बड़ी अद्भुत बात है कि इस घटना को तुमने पहले ही सपने में देख लिया था। मेरे दरबार में तुम जिस प्रकार की नौकरी चाहते हो मांग लो।"

अयोग्य ने राजा को बताया कि घुड़सवारी करना उसे बहुत प्रिय है। फिर क्या था, राजा ने

उसे घुड़साल के अधिकारी पद पर नियुक्त कर दिया। उस दिन से वह अपनी पसन्द के घोड़े पर सवार होकर बड़े मज़े से नगर में घूमने लगा।

कुछ समय बीतने पर एक दिन वह राजा शिववर्मा से मिलने गया और बोला—"महाराज, आज रात को मैंने बड़ा बुरा सपना देखा है।"

"तुम डरो मत, सुनाओ, मैं सब कुछ सुनने के लिए तैयार हूँ।" राजा ने कहा।

इस पर अयोग्य ने अपना सपना इस प्रकार सुनाया—"महाराज, मैंने देखा कि आप जब राजदरबार में विराजमान थे, उसी समय एक तपस्वी आप से मिलने आए और उन्होंने आपको सम्बोधित करते हुए कहा, "राजन्, आप इस समय मुझे पहचान नहीं सकते कि मैं कौन हूँ। किसी समय आप मेरे प्रिय शिष्य रह चुके हैं। भोग विलास के प्रति आपके लोभ को देखकर मैंने सारी सुखसुविधाएँ प्रदान कीं। लेकिन आज से मेरे अनुग्रह की अवधि समाप्त हो गई। इसलिए इसी समय आप मेरे साथ चलिए।" यह कहकर उन्होंने आप पर मंत्र-जल छिड़क कर आपके पूर्व जीवन की झाँकी दिखला दी।

आपने उसी क्षण तपस्वी से कहा—"गुरुदेव, आपकी जो आज्ञा। मैं अभी आपके साथ चलने के लिए तैयार हूँ।" यह कहकर आपने पार्श्व में दृष्टि घुमाई और आपने मुझे वहाँ उपस्थित देखकर मेरे सिर पर अपना मुकुट पहनाया। इसके बाद मेरी उँगली में राजमुद्रिका पहना दी और कहा—"आज से मेरे राज्य का पूरा दायित्व तुम्हारे ऊपर है। यह राज्य, और यहाँ की सारी जनता की ज़िम्मेदारी आज से तुम्हारी ही है।"

राजा शिववर्मा अयोग्य के सपने का सारा वृत्तान्त सुनकर चकित रह गए। कुछ समय मौन रहने के बाद वे अंतःपुर में चले गए।

दूसरे दिन सबेरे अयोग्य के सपने के अनुसार सारा कार्य सम्पन्न हुआ। राजा शिववर्मा राज-दरबार में पधारे हुए तपस्वी के साथ जाने के लिए तैयार हो गए। जाते समय अपना राजमुकुट उन्होंने अयोग्य के हाथों सौंप दिया। सभासदों ने जहाँ एक ओर से अपने पुराने राजा के जाने पर दुःख प्रकट किया वहीं नये राजा के प्रति जयजयकार भी किया। उसी समय एक संदेश वाहक आ पहुँचा और उसने अयोग्य को सम्बोधित कर कहा—"महाराज, क्षमा करें, इस शुभ मुहूर्त में मैं आपके लिए एक बड़ी ख़बर ले आया हूँ। हमारे पुराने शत्रु अनन्तसेन ने पुनः हमारे राज्य पर आक्रमण कर दिया है। हमारी सेना युद्ध के लिए तैयार हो आपके नेतृत्व की प्रतीक्षा कर रही है।"

यह समाचार सुनकर अयोग्य एकदम घबरा गया। क्योंकि उसे तो तलवार पकड़ना भी नहीं आता था। ऐसी हालत में वह युद्ध का संचालन कैसे कर सकेगा। उस संकट से कैसा बचा जाए। उसने बहुत विचार किया और फिर मंत्री को बुलाकर उससे कहा—"मंत्रीवर! अनन्तसेन यदि पुनः हम पर आक्रमण कर रहा है तो इसका मतलब यही है कि उसने उस बार भारी सेना इकट्ठी की है। आप प्रयास कीजिए कि वे संधि के लिए तैयार हो जाएँ।" इतना कहकर वह राज दरबार से उठकर चला गया।

बड़े मुलायम गद्दे पर सोने के बावजूद उस रात उसे नींद काफ़ी देर तक नहीं आई। काफ़ी रात बीतने के बाद उसकी आँख लग गई और उसने सपना देखा—कि वह राजमहल छोड़कर भाग रहा है और कोई व्यक्ति उसका पीछा कर रहा है और अन्त में उस व्यक्ति ने उसे पकड़ लिया। इतने में उसकी आँख खुल गई।

सपने में देखे अनुसार ही वह घबराकर बिस्तर से उठा और भागने लगा। प्रवेश द्वार पर पहुँचते ही द्वार पर पहरेदार के वेश में राजा शिववर्मा ने उसे पकड़ लिया।

पहरेदार के वेश में राजा शिववर्मा को देखकर, अयोग्य सिर से पैर तक काँप उठा। राजा ने उसे सांत्वना देते हुए कहा—"मैंने तो

सोचा था कि तुम स्वप्न में भविष्य का वृतान्त देखकर बतानेवाले कोई बड़े ज्येतिषी हो। लेकिन जिस क्षुद्र शक्ति ने तुमको ग्रस लिया है, वह तुम्हारे सपने को साकार बनाने की क्षमता भी रखती है। पहली बार जो सपना तुमने देखा था वह मेरे हित की कामना से प्रेरित होकर देखा था। क्योंकि तुमने मेरी दानशीलता, साहस व पराक्रम के बारे में सुना था। इसलिए मेरे प्राण बचाने वाला सपना तुमने देखा। बोलो, मेरी बात सच है न ?"

"जी हाँ, महाराज ! सराय में ठहरे यात्रियों से ही मैंने आपकी कृपा और दानशीलता के बारे में बड़ी चर्चा सुनी थी।" अयोग्य ने डरते हुए जवाब दिया।

राजा शिववर्मा ने मुस्कराते कहा—"लेकिन मेरा आश्रय पाने के बाद तुम्हारा स्वार्थ बढ़ गया। चलो, अच्छा हुआ कि फिर भी तुम्हारे अन्दर मेरे प्राण लेने का विचार नहीं आया। राजपद के मोह में पड़कर तुमने दूसरा सपना देखा था। किन्तु दूसरे राजा को हमारे राज्य पर आक्रमण और युद्ध में अपनी सेना का नेतृत्व करने की बात सुनकर तुम घबरा गए। इसीलिए तुमने यह तीसरा सपना देखा। ये सब तुम्हारे मन की कल्पनाएँ मात्र हैं, जो स्वप्न के रूप में घटित होती रहती हैं। तुम्हारे वास्तविक रूप को जानने के लिए ही मैंने तुम्हारे दूसरे सपने को सच साबित करने का नाटक रचा था। मेरा सन्यास लेना और शत्रु राजा द्वारा हमारे राज्य पर आक्रमण करना—ये सब मेरी कल्पनाएँ मात्र हैं।"

अयोग्य की आँखों में आँसू आ गए और वह माफ़ी माँगते हुए राजा के चरणों में गिर पड़ा। राजा ने उसे उठाया और कहा—"देखो, उस आसन पर रखी गठरी में एक हज़ार स्वर्णमुद्राएँ हैं, उन्हें लेकर अपने लायक कोई काम-धंधा ढूँढ़कर सुख से अपना जीवन बिताओ। क्योंकि तुम्हारे जैसे चंचल चित्तवाले व्यक्ति का मेरे दरबार में रहना राज्य के हित में नहीं है।"

अयोग्य ने नतमस्तक होकर राजा को प्रणाम किया और स्वर्णमुद्राओं से भरी गठरी को लेकर वहाँ से चला गया।

पहली चोरी

गोपाल व चंद्रभानु नामक दो मित्र अपने गाँव में जीविका का कोई उपाय न देखकर एक नगर में पहुँचे और नौकरी पाने की उन्होंने भरपूर कोशिश की, लेकिन वहाँ भी उन्हें कहीं कोई नौकरी नहीं मिली। अन्त में उन्होंने चोरी करनेका व्यवसाय शुरू किया।

ऐसा निश्चय कर सारे दिन वे गलियों व मुहल्लों की ख़ाक छानते फिरे और शामको वे एक ऐसे मकान के सामने पहुँचे जहाँ ताला बन्द था। उन्होंने उस मकान में चोरी करने का निश्चय किया। गोपाल किसी भी ताले को नक़ली चाभी से खोल सकने की क्षमता रखता था। उन्होंने एक योजना बनाई—गोपाल पहले मकान का ताला खोल देगा, फिर चंद्रभानु भीतर जाकर माल चुराकर पीछे के दरवाज़े से बाहर निकल आएगा। इतना होने तक गोपाल उस घर के चारों तरफ़ पहरा देता रहेगा।

अपनी योजना के अनुसार चंद्रभानु ने मकान में प्रवेश किया, लेकिन वहाँ उसे कोई मूल्यवान वस्तु नज़र नहीं आई। एक कमरे में उसने देखा कि एक तिजोरी रखी हुई है। उसने सोचा ज़रूर, हो न हो, यहाँ रुपये-पैसे, तथा हीरे, जवाहरात, और सोने-चाँदी के गहने रखे होंगे।

चंद्रभानु ने पिछवाड़े की राह से बाहर निकलकर यह ख़बर गोपाल को दी। दोनों ने मिलकर उस मकान के बारे में जानकारी हासिल की। वह मकान नीलकंठ नामक एक जौहरी का था।

गोपाल ने चंद्रभानु से कहा—"दोस्त, तुम घर में घुसकर छत पर चढ़कर छिप जाओ। जब देखो, कि मकान मालिक घर में आकर सो गया है, तो ऊपर से उतर कर चाभी लेकर तिजोरी खोल कर सारे धन व गहने चुराकर बाहर आ जाना।"

गिरिजा कुमार

"यदि इसी बीच मकान मालिक नीलकंठ जाग जाए तो क्या होगा ?" चंद्रभानु ने पूछा ।

"इसके लिए मेरे पास एक दवा है ।" इतना कह कर गोपाल ने एक छोटीसी शीशी चंद्रभानु के हाथ में दी और कहा—"देखो तुम इस शीशी की डाँट निकालकर नीलकंठ की नाक के पास रख देना । वह सुबह तक नहीं जागेगा ।"

इसके बाद गोपाल ने उस मकान का ताला खोल दिया ; चंद्रभानु को अन्दर घुसा कर उसने पहले की तरह ही बाहर से तालाबन्द कर दिया । चंद्रभानु वहाँ ऊपर जाकर छत पर छिप कर बैठ गया । काफ़ी रात बीतने पर नीलकंठ घर लौटा । स्नान व भोजन के बाद वह अपना बही-खाता खोल कर बैठ गया । इधर चंद्रभानु को छत पर बैठे-बैठे काफ़ी देर हो गई और उसे झपकी आने लगी । कुछ देर बाद मकान-मालिक उठकर बिस्तर पर जा लेटा, किन्तु इसी समय दरवाज़े पर दस्तक हुई ।

नीलकंठ ने पूछा—"कौन ?"

"हुज़ूर, मैं रामापुर से आया हूँ । आपके ससुर-जी ने मुझे यहाँ भेजा है, क्योंकि आपके ज्येष्ठ पुत्र को सर्प ने डस लिया है ।" दस्तक देनेवाले ने जवाब दिया ।

नीलकंठ ने घबराकर दरवाज़ा खोल दिया । उस आगन्तुक ने झट भीतर घुस कर किवाड़ बन्द करके छुरी दिखाते हुए धमकी दी—"यदि चिल्लाओगे तो जान से मार डालूँगा ।"

"कौन हो तुम ?" नीलकंठ ने घबराकर पूछा । "जानते नहीं ? मैं एक चोर हूँ । जल्दी से तिजोरी खोलो और सारे धन व गहने मेरे हवाले कर दो । वरना...," चोर ने कहा ।

नीलकंठ ने तिजोरी खोलने व धन देने से इनकार कर दिया तथा उसका सामना करने के लिए तैयार हो गया । चोर ने तुरंत उसे पकड़ लिया व उसकी गर्दन पर अपनी छुरी को चलाना चाहा कि इतने में ऊपर छिपा हुआ चंद्रभानु छत से नीचे कूद पड़ा । और उसने ज़ोर से चोर के हाथ पर प्रहार किया जिससे छुरी इसके हाथ से छूट कर नीचे जा गिरी ।

चोर पल भर के लिए चकित रह गया, लेकिन तुरंत संभल कर उसने चंद्रभानु पर प्रहार करना चाहा । किन्तु इसके पहले कि वह चोर कुछ कर

पाता नीलकंठ और चंद्रभानु ने मिलकर उसको पकड़कर रस्सी से कस के बाँध दिया ।

नीलकंठ तुरंत बाहर गया और कुछ ही देर में दो सिपाहियों को साथ लाकर उन्हें सारा वृत्तान्त कह सुनाया । सिपाही उस चोर को बन्दी बनाकर ले गए ।

चंद्रभानु चकित होकर चारों ओर देख रहा था कि तभी नीलकंठ ने उससे पूछा—"तुम कौन हो ? और यहाँ कैसे आए ?"

चंद्रभानु ने काँपते हुए कहा—"मुझे क्षमा करें, महाशय ।" इतना कह कर, इस नगर में आने से लेकर अब तक का सारा वृत्तान्त कह सुनाया । फिर उसने कहा—"महाराज, इससे पहले कि अपनी योजना के अनुसार कुछ करते पहले ही एक दूसरा चोर यहाँ घुस आया ।"

नीलकंठ ने पल भर मौन रहकर उससे पूछा—"क्या यह तुम्हारी पहली चोरी है ?"

"जी, महाशय !" चंद्रभानु ने उत्तर दिया ।

"अगर तुम पुराने चोर होते तो मेरी रक्षा न करते । उस चोर के द्वारा मुझे मार डाले जाने पर तुम उसको डरा-धमकाकर उस धन में से आधा हिस्सा ले लेते ।" नीलकंठ ने कहा ।

"हुज़ूर, मैं नहीं जानता कि मैं क्या करता । लेकिन मैंने भी पहले यही सोचा था कि मेरे चोरी करते वक्त यदि आप मेरा विरोध करेंगे तो मैं आपको जान से मार डालूँगा । किन्तु जब उस चोर ने आपको मारना चाहा तो मुझसे यह नहीं देखा गया और मैं आपकी रक्षा करने के लिए दौड़ पड़ा। यह सोचकर अब मुझे भी अपने व्यवहार पर आश्चर्य हो रहा है" चंद्रभानु ने जवाब दिया ।

नीलकंठ ने हँस कर कहा—"इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं । दुष्ट से दुष्ट व्यक्ति के भीतर भी मानवता थोड़ी बहुत मात्रा में ज़रूर छिपी रहती है । वह किन्हीं संदर्भों में अपने आप प्रकट हो जाती है ।"

इसके बाद नीलकंठ ने उन दोनों मित्रों को अपनी दूकान पर नौकरी दी । आगे चलकर वे दोनों अत्यन्त विश्वास व वफ़ादारी के साथ उस दूकान पर करते हुए उस नगर के स्थायी निवासी बन गए ।

४

[प्राचीन खण्डहरों में देखी नारी प्रतिमा की सुरक्षा का उचित प्रबंध करके जयराज जलप्रपात को पार कर ज्ञानभूमि तक पहुँचा। वहाँ के पुजारी के चंगुल से बचकर भागनेवाले जयराज का राजभटों ने पीछा किया। थोड़ी दूर आगे चलने पर वे एक छोटी पहाड़ी की तरफ़ ताकते खड़े रह गये। जयराज ने भी उस तरफ़ देखा। आगे क्या हुआ पढ़िए।]

उस पहाडी की चोटी पर पाँच-छह साल की उमरवाला एक सुंदर बालक निश्चल खड़ा था। किसी राजकुमार की भाँती कीमती वस्त्र उसने धारण किये थे। उन चमकीले वस्त्रों को धारण कर बालक बहुत ही सूबसूरत लग रहा था। जिस किसी की नज़र उस पर पड़ जाती, वह उसे बस देखता ही रहता। एक डरावना क्रूर जानवर उस बालक की ओर बढ़ रहा था।

सैनिकों ने मन-ही-मन कहा—"यह तो कोई राजकुमार लगता है! इसी को भक्षण करने यह भयंकर जानवर बढ़ रहा है।"

"यह क्रूर जानवर राजकुमार को खाने जा रहा है यह जानकर भी तुम लोग दूर से तमाशा देख रहे हो? तुम को राजकुमार के प्रति ज़रा भी प्रेम नहीं? बुत बन के क्या देख रहे हो? आओ, मेरी सहायता करो।" कमर से कटार निकालते हुए जयराज ने कहा।

सैनिक भी जयराज की ओर अचरजभरी

मनोज दास

हुई, तो यह जानवर जाने क्या उत्पात मचाएगा! दुष्टों के साथ दुष्ट का-सा ही व्यवहार करना चाहिए। यह सोचने का वक़्त नहीं है, कुछ निश्चय करके तुरन्त कार्रवाई करनी चाहिए।"

थोड़ी देर के लिए राजा ने विस्मय के साथ जयराज की ओर देखा, फिर व्यथा के साथ अपने पुत्र की ओर देखने लगा।

इसी बीच वह भयंकर जानवर राजकुमार के पास पहुँचा। राजकुमार को निगलने के हेतु उसने अग्निज्वाला-सी अपनी जिह्वा को पसारा। उसी समय जयराज ने अपनी तलवार म्यान से खींच ली और बिजली-सी गति से आगे बढ़कर उसका सिर काट दिया। उसका सिर उछलकर दूर जा गिरा और वहाँ से लुढ़कता हुआ राजा के रथ के पीछे जा रुक गया। अंतिम बार उसकी नासिका से जो ज्वाला निकली, उससे उसी समय वहाँ पहुँचे कुबड़े की डाढ़ी का कुछ हिस्सा जल गया।

"अरे! यह तुमने क्या किया? न जाने इसका क्या भयंकर परिणाम होगा! तुम नहीं जानते तुमने क्या किया।" कुबड़े ने जयराज से गुस्से में आकर पूछा।

"राजकुमार को निगलनेवाले भयंकर जानवर का मैंने अंत कर दिया। इस के पुरस्कार-स्वरूप राजकुमारी के साथ विवाह कर दिया जाए, और आधा राज्य भी मुझे सौंपा जाए, तो भी पर्याप्त नहीं होगा। और फिर मैं भी यह सब नहीं चाहता हूँ।" जयराज ने उत्तर दिया।

"इस दुष्ट को पकड़ कर बन्दी बना दो।"

निगाह से देखने लगे।

उसी समय वहाँ एक रथ आन पहुँचा। दो मोटे आदमी वायु-वेग से उस रथ को खींचकर ले आ रहे थे। यह देख जयराज को आश्चर्य लगा।

"महाराज की जय!" कहते हुए रथ पर आरूढ राजा को सैनिकों ने प्रणाम किया।

उस बालक की ओर देखकर राजा की आँखों में आँसू आ गये। "बेटा, मुझे छोड़कर तुम चले जा रहे हो!" राजा ने कहा।

जयराज से रहा नहीं गया। उसने प्रार्थना की—"महाराज, आप अपने सैनिकों को आदेश दें कि वे इस क्रूर जानवर को मार डालें और बालक की रक्षा करें। अगर इस में ज़रा भी देर

सुन रहा था। उसकी समझ में नहीं आया कि इस दुष्ट जानवर के प्रति उनके मन में यह श्रद्धा-भक्ति क्यों है? उसका स्मारक-भवन बनाने की क्या ज़रूरत है? उसे दफ़नाने के बदले ऐसे ही फेंक देना चाहिए, ताकि कौए अपनी भूख मिटा सके।

जयराज को कारागार में बन्दी बनाया गया। आधी रात बीतने पर भी उसे नींद न आई। वह सोच रहा था-इस भयंकर जानवर की मौत पर राजा और कुबड़ा इतने दुखी क्यों हो रहे हैं ? युवराज की रक्षा करनेके उपलक्ष्य में पुरस्कार पाने के बदले बन्दी बनाकर उसे क्यों दण्ड दिया जा रहा है ?

उसी दिन आधी रात में कारागार के किवाड़ अचानक खुल गये। अंग-रक्षकों के बिना राजा ने अकेले कारागृह में प्रवेश किया।

राजा ने जयराज से प्रेमपूर्वक कहा—"तुम ने मेरे पुत्र की रक्षा की। मैं इसके लिए तुम्हारा एहसान मानता हूँ। तुम्हारा मर जाना मुझे नागवार है।"

"महाराज, आपकी कृपा के लिए मैं अत्यन्त ऋणी हूँ। पर मैं यह नहीं समझ सकता कि कोई मेरी मौत की कामना क्यों रखे ?" जयराज ने सवाल किया।

"इस बात से शायद तुम परिचित नहीं हो कि यह ज्ञानभूमि है। ज्ञान-संपादन के लिए अनुशासन की नितान्त आवश्यकता है। वह भयंकर जानवर अनुशासन का अधि-देवता है। उस को एक पवित्र 'महा-मृग' मानते हैं। वह हर

कुबड़े ने भटों को आज्ञा की।

राजा ने कहा—"इस को पकड़ कर राजमहल के पासवाले बन्दी-गृह में डाल दो। यह तो बड़ा शैतान निकला। शैतानी की भी तो कोई हद होती है! इसने बड़ा ही अनर्थ किया। न जाने अब आगे क्या होगा!"

इसी बीच युवराज पहाड़ से नीचे उतर आया और उसने कृतज्ञताभरी नज़र से जयराज की ओर देखा। भटों ने जयराज को बन्दी बनाया और वे उसे कारागार की ओर ले जाने लगे।

राजा और कुबड़ा जयराज के पीछे चल रहे थे। वे सोच रहे थे कि इस विचित्र जानवर की लाश को कहाँ दफनाया जाए और उसके लिए कैसा स्मारक-भवन बनाया जाए। जयराज ये बातें

रोज़ केवल एक ही आदमी को खाता है। उस की इच्छा को पूर्ण करना हमारे अनुशासन का एक अंग है। केवल राजा होने के कारण मैं उस अनुशासन का भंग कैसे कर सकता हूँ ? समझ गये ? " राजा ने समझाते हुए कहा।

"महाराज, वह महा-मृग अनुशासन का अधिदेवता कैसे हो सकता है " जयराज ने पूछा।

"मैं तुम्हें एक राज़ की बात देता हूँ। वह महा-मृग केवल एक साधारण राक्षस मात्र है। पर प्रजा-जनों के मन में अगर यह भय न हो कि अनुशासन के लिए एक अधि-देवता है, तो वे अनुशासन का पालन नहीं करेंगे। साथ-ही-साथ अधि-देवता जितना अधिक भयंकर हो, उतने ही अधिक भय के साथ जनता अनुशासन का पालन करेगी।" राजा ने समझाते हुए कहा।

"महाराज, क्या आप का ज्ञान आप को यह बताता है कि अपने रथ में घोड़ों के बदले मनुष्यों को जोता जाएँ ?" जयराज ने पूछा।

जयराज की पीठ थपथपाते हुए राजा ने कहा—"तुम्हें मानव के रूप में जो लोग दिखाई दे रहे हैं, वे सचमुच घोड़े हैं। हमने घोड़ों को मनुष्यों की आकृति प्रदान की है। इसी प्रकार हम चाहे तो मनुष्यों को भी घोड़ों के रूप में बदल सकते हैं। इससे तुम समझते हो कि हमारा विज्ञान का ज्ञान कितना गहरा है।"

"हाँ, अच्छी तरह समझ लिया, महाराज !" मुस्कुराते हुए जयराज ने कहा।

राजा ने शंकित होकर पूछा—"बताओ भला, क्या समझे ?"

"अपने लालच के लिए अनुपयोगी ज्ञान की मदद से वह क्रूर राक्षस-मृग भी अनुशासन का अधिदेवता बनाया जा सकता है! यही न ?" जयराज ने फिर हँसते हुए कहा।

थोड़ी देर चुप रहकर फिर राजा ने कहा—"इस ज्ञान-भूमी में हम लोग जो अद्भुत कार्य कर रहे हैं, उसे देखना चाहो तो चलो हमारे साथ।"—इतना कह कर राजा आगे बढ़े। जयराज राजा के पीछे चलने लगा।

टेढ़ी-मेढ़ी सीढ़ियों पर चढ़ते-चढ़ते राजा और जयराज राजमहल के ऊपरवाले तल पर पहुँच गये। वहाँ एक कोने में गुंबज के जैसा एक बुर्ज़ दिखाई दिया जो अपने सफ़ेद रंग से चमक रहा

था। बुर्ज़ के केंद्र में लाल रंग का एक गोल-सा धब्बा था। राजा ने अपने हाथ से उसे तीन बार स्पर्श किया। इतने में वह धब्बा अदृश्य हो गया और उसकी जगह एक द्वार खुल गया। उसके अन्दर प्रवेश करते हुए राजा ने समझाया—"यह एक विशेष प्रकार का बुर्ज़ है। इसके द्वारा हम प्रत्यक्ष रूप से देख सकते हैं कि ज्ञान-भूमि में किस कोने में क्या क्या हो रहा है। साथ ही साथ सुन भी सकते हैं। ऐसा मालूम होता है, जैसे कि सब हमारी आँखों के सामने घटित हो रहा है। लो, इसके भीतर आकर देखो।" यह कहते हुए राजा ने जयराज को एक दीवार में जड़े आईने जैसा एक स्थान दिखाया।

जयराज ने उसके अन्दर झाँक कर देखा। विविध भागों में विभाजित एक नगर उसे दिखाई दिया। आँखों को चौंधियानेवाली रोशनी में पुरुष और स्त्रियाँ अनेकानेक कामों में व्यस्त हैं। पर जयराज की समझ में यह नहीं आया कि वे लोग क्या कर रहे हैं?

"राजन, ये सब लोग क्या कर रहे हैं?" जयराज ने कुतूहलवश पूछा।

राजा ने उत्तर दिया—"एक क्या, सैकड़ों कार्य ये लोग कर रहे हैं। लो, बाईं तरफ़ देखो। वहाँ पर कुछ गणित-शास्त्री हमारे राज्य के समस्त बालू-कणों का हिसाब लगाने का सूत्र जानने के प्रयत्न में लगे हैं।"

जयराज ने पूछा—"महाराज, इस अनुसंधान द्वारा मानव-समाज का कौन-सा हित सिद्ध होगा?"

"हूँ, मानव-समाज का हित? शायद तुम नहीं जानते, ज्ञान सब से अधिक शक्तिशाली होता है। कह नहीं सकते कि कौन ज्ञान कब हमारे लिए उपयोगी सिद्ध हो। इसीलिए हम सब प्रकार की विद्याओं का ज्ञान संपादित करके उसे सुरक्षित रखते हैं। देखो, वह सामने कांति-गोपुर देख रहे हो न? उसकी महिमा जानने के लिए हमारे वैज्ञानिक बरसों से अनुसंधान-कार्य में जुट गये हैं। हमारे समस्त अनुसंधानों के लिए यह सिरमौर है।" राजा ने अभिमान और गर्व के साथ कहा।

"महाराज, मैं समझता नहीं इसमें ऐसा क्या महान अनुसंधान है?" जयराज ने हँसते हुए पूछा।

राजा ने दर्प से कहा—"हाँ, अच्छा सवाल पछा तुमने। मैं ब-खुशी उत्तर दूँगा। सुनो, अगर हम चाहें तो भविष्य में यहीं से नक्षत्रों के टुकड़े-टुकड़े कर सकते हैं। संभवतः इसी को साधने के लिए हमारी खोज जारी है।"

"यह तो निरी मूर्खता है, क्रूरता है।" जयराज ने अभिप्राय दिया।

राजा ने गरज कर कहा—"यह तुम्हारा कैसा अहंकार है ?"

"महाराज, भोले-भाले टिमटिमानेवाले उन बेचारे नक्षत्रों ने आप लोगों को क्या हानि पहुँचाई है, जो आप उनका ध्वंस करना चाहते हैं ?" जयराज ने राजा से पूछा।

"ये नक्षत्र ऐसे भोले-भाले और छोटे-छोटे नहीं हैं जैसा तुम समझ रहे हो ! हमारी पृथ्वी से ये कहीं बड़े हैं। हो सकता है कि उन में हमसे भी कहीं अधिक शक्तिशाली मानव निवास करते हों। किसी भी क्षण वे हम पर हमला कर सकते हैं ! इसलिए अपनी सुरक्षा का प्रबंध हम स्वयं करें तो इसमें गलती भला क्या है?" राजा ने पूछा।

"निरर्थक शंकाओं के कारण आप लोग अनुपम मानव-शक्ति का सरासर दुरुपयोग कर रहे हैं। महाराज, आप ही सोचिए, जैसा कि आप कहते हैं, अगर नक्षत्र-मण्डलों के लोग हमारी पृथ्वी पर आ भी जायें, तो वे प्रेम व अनुराग का संदेशा लेकर भी आ सकते हैं ! आपके अनुसंधानों का आधार भय ही क्यों हो ?" जयराज ने शंका प्रदर्शित की।

राजा ने समाधान किया—"भय हो, तो इसमें भला दोष क्या है ? भय ही तो सारे मानव-समाज को एक सूत्र में पिरोने के लिए सहायक सिद्ध हो सकता है।"

"माना कि डाकुओं से डर कर ही हम लोग कुछ समय के लिए मिल-जुल कर रहते हैं, पर महाराज, क्या ऐसी तात्कालिक एकता ही आपको वांछनीय है ? हाँ, यह बताइए कि इस आधी रात के समय आप की प्रजा आराम से सो क्यों नहीं सकती ?" जयराज ने पूछा।

"सो जाने की बात करते हो ? नींद को भुला देने के लिए हम ने एक उपाय को ढूँढ़ निकाला है। जो लोग बिना सोये दस वर्ष बिताते हैं उनको 'महामृग पदक' के साथ हम सम्मानित करते

हैं।" राजा ने गर्व से कहा।

"न सोना हमारे स्वास्थ्य के लिये हानिकारक नहीं है क्या महाराज ?" जयराज ने पूछा।

"नींद न आने पर अस्वस्थ होनेसे बचने के उपायों का हमें पता है।" यों कहकर राजा ने एक अजीब प्रदेश की ओर संकेत किया। कहा—"देखो, उस मण्डप को देखो। वहाँ कुछ लोगों के लिए हमारे प्रमुख पुजारी ने 'विलाप-समारोह' का अयोजन किया है।"

जयराज ने उस दिशा में देखा। एक विशाल मंडप के बीच दीवार पर अत्यन्त क्रूर महामृग का चित्र चित्रित किया गया है। मण्डप से अंदर अपने चिन्ताकुल वदन झुकाये अनेक लोग बैठे हुए हैं। उनकी समस्त चिंताओं का कारण तो जयराज समझ न सका। सोचता ही रह गया। इतने में एक ऊँचे वेदिका पर खड़े पुजारी सब आगंतुकों से निवेदन कर रहा है—"आप लोगों को मालूम ही होगा कि हमारे पूजनीय महामृग का वध किया गया है। हमारी इस ज्ञानभूमि के भीतर अनधिकार प्रवेश करके महामृग का संहार करनेवाला आदमी साधरण नहीं है। आप लोगों को बतानेकी आवश्यकता नहीं है कि वह मानव के रूप में एक राक्षस है। हमारे किसी अज्ञात शत्रु की प्रेणा से वह यहाँ आया है। वह अत्यन्त बुद्धिमान दुष्ट है। महामृग जब राजकुमार को निगलनेवाला था, तब उसने मौक़ा पाकर उस की हत्या की, और इस तरह महाराजा की सहानुभूति प्राप्त करनी चाही। फिर भी हम ने उसे बन्दी तो बना ही दिया है।"

"महाराज, यह झूठ बोलनेवाला जो कुछ बक रहा है, उस पर आप विश्वास कैसे करते हैं ? बड़े आश्चर्य की बात है कि सब कुछ जानते हुए भी आप इन बातों में विश्वास करते हैं। उस महा-मृग का वध किन परिस्थितियों में किया गया उनसे आप अपरिचित नहीं है। फिर भी इन झूठी बातों में आप कैसे आते हैं, महाराज ?" जयराज ने गुस्से में आकर राजा से पूछा।

राजा ने कोई उत्तर नहीं दिया। पर जयराज की तरफ़ शंकाभरी दृष्टि से देखा।

(क्रमशः)
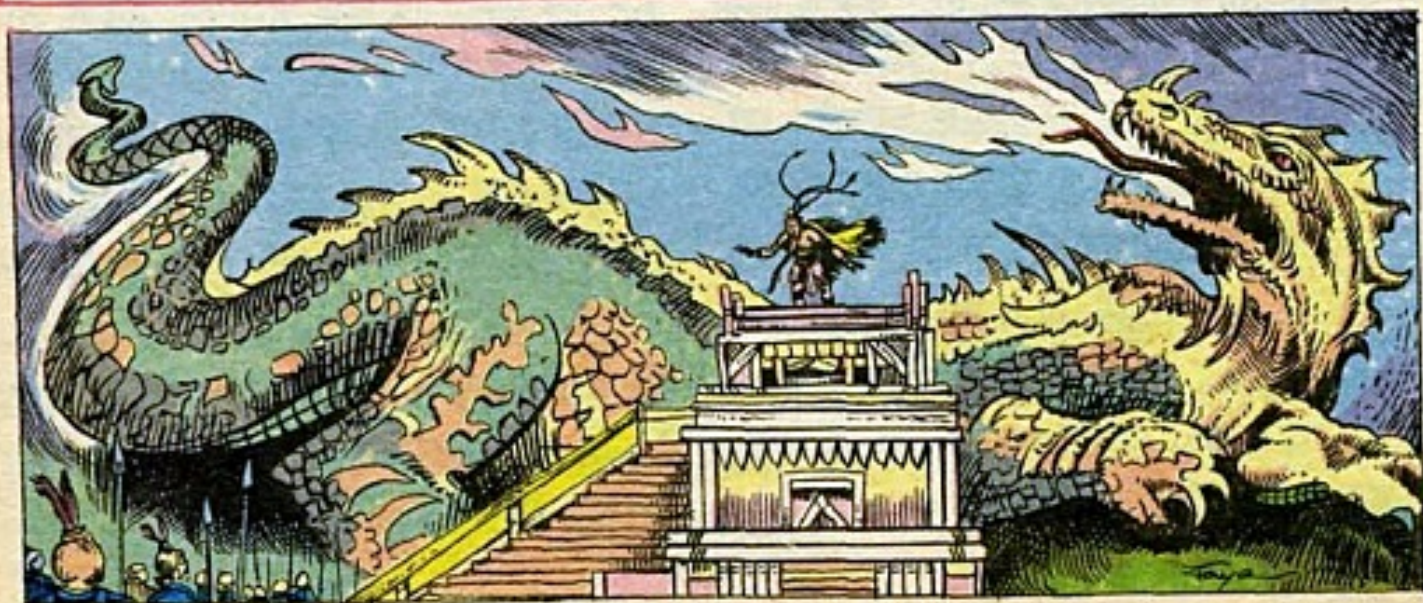
राक्षसराजा का परिहास

दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़के पास लौट आये। पेड़ से शव को उतारा और कंधे पर उठाकर मौन धारण कर स्मशान की ओर चल पड़े। शव में वास करनेवाले वेताल ने पूछा, "राजन, आपने यह कहावत ज़रूर सुनी होगी—शक्ति से बाहर का कार्य अनर्थकारी होता है। आप इस अर्धरात्रि के समय जो कष्ट झेल रहे हैं, वह अपने किसी वचन-पालन के हेतु ही है, ऐसा मुझे लग रहा है। अपनी जाति का अहित होगा ऐसा मानकर राक्षस राजा ने बलवान होते हुए भी न केवल अपना वचन भंग किया, बल्कि शक्तिशाली राजा का परिहास भी किया। यही कहानी मैं आपको सुनाता हूँ—सावधानी से सुनिये। आपका श्रमपरिहार भी होगा।"

वेताल कहानी सुनाने लगा—मगध देशके राजा माधवसेन अपने राज्य की असली स्थिति जानने के लिए हमेशा छद्मवेष में घूमा करते थे। इस से उन को अपनी प्रजा के सुख-दुख का

वास्तव ज्ञान होता था । राज्य की सुव्यवस्था के लिए क़ीमती संकेत उनको मिल जाते । उनको मालूम हो जाता कि ग़रीब प्रजा के प्रति कहाँ अन्याय हो रहा है । एक दिन संचार करते हुए उन्होंने बड़ा ही विचित्र दृश्य देखा ।

एक वृक्ष के नीचे एक बड़ा घूस सो रहा था । कुत्ते के हमले से बचने के लिए एक घबड़ायी हुई बिल्ली वहाँ आयी; मगर घूस को देखकर और ही घबराकर वहाँ से भाग गयी ।

उस घूस को देखकर माधवसेन ने सोचा, "मेरे राज्य में घूस भी बिल्ली को डराने लायक मोटे-ताज़े हो गये हैं । ऐसे प्राणी को ज़िंदा नहीं रहने देना चाहिए ।" इस विचार के आते ही उसने अपनी तलवार खींच ली ।

लेकिन युद्धभूमि में योद्धाओं को कंठस्नान करानेवाली उस तलवार से एक यःकश्चित घूस को मारना राजा को ठीक नहीं लगा । राजाने तलवार फिर म्यान में रख दी और पास पड़ा एक बड़ासा पत्थर उसने उठाया । अब वह पत्थर घूस पर फेंकने ही वाला था कि अचानक उसको एक नियम याद आया । उसके राजघराने का नियम था कि, सोनेवाले किसी प्राणी की नींद में हत्या नहीं करनी चाहिए । नियम का स्मरण होते ही राजाने धीरे से लात मारकर घूस को जगाया ।

फिर क्या था! घूस ने एकदम मानवरूप धारण किया !

माधवसेन ने विस्मय में आकर उससे पूछा, "तुम कौन हो? घूस के वेष में यहाँ क्यों पड़े हुए थे ?"

"मैं राक्षसों का राजा प्रचण्ड । बड़े आश्चर्य की बात है कि तुम मुझे जानते नहीं । मैं अनेक रूप लेकर इस भूमि पर विहार करता हूँ । एक विशेष कार्य से पृथ्वी पर आया हूँ । मेरा वास्तविक रूप देखकर लोग घबड़ा न जाएँ इस विचार से घूस के रूप में घूम रहा हूँ । यहाँ मैंने यह देखा कि, खुली जगह में सोते हुए जानवरों को जो सुरक्षितता महसूस होती है, वह मानव समुदाय के लिए नहीं होती । इसीलिए मैं घूस की आकृति में ही सो रहा था । परंतु आप कौन है ?" उस व्यक्ति ने पूछा ।

"मानव समुदाय के प्राणों की सुरक्षितता क्यों नहीं है ?" माधवसेन ने विस्मय में आकर पूछा । "मेरे बदले और किसीने तुम्हें घूस के रूप में

देखा होता, तो तुम्हारे प्राण कभी के निकल गये होते।" यह कहकर राजाने अपना परिचय भी उस आदमी को दिया ।

राजा की बात सुनकर राक्षस-राजा ने कहा, "हम राक्षसों के लिये इन दिनों एक नियम है—मानव आकृति छारण करने पर हमें स्वयं अपनी रक्षा करनी पड़ती है। राक्षस होते हुए भी ऐसी हालतं में हम में राक्षस का बल नहीं होता है। साधारण मानव में जितनी शक्ति होती है, उतनी ही हम में भी होती है। लेकिन अन्य जंतुओं की आकृति में होते हुए हमें कोई विपदा नहीं होती। चाहे जो हो, तुम से मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई। मानव-प्रभु के लिये मेरा प्रणाम।" यह कहते हुए उसने माधवसेन को प्रणाम किया ।

"अभी थोड़ी देर पहले तुमने कहा था, कि तुम किसी कार्यवश हमारे राज्यमें आये हुए हो। क्या मैं इसका कारण जान सकता हूँ? पता नहीं कौन-सा महत कार्य करनेके लिए तुम मेरे राज्य में विचर रहे हो। यहाँ किसी के उपकार का कार्य करनेका तुम्हारा इरादा हो तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। तुम्हारे किसी काम से मेरी प्रजा की हानी हो रही हो, तो तुम्हें उचित समय पर रोकना मेरा काम है।" माधवसेन ने कहा।

"हाल ही में हमारे कुछ राक्षस नागरिक पृथ्वी का भ्रमण करने आये और नरभक्षण करके लौट आये। वैसे नर-भक्षण हम राक्षसों के लिये निषिद्ध नहीं है। लेकिन कुछ समय से हमारे लिये

कुछ कठोर नियम अमल में हैं। उन नियमों के अनुसार इन दिनों आत्मरक्षा के लिये भी हम मनुष्यवध नहीं कर सकते। यदि कोई अन्य जानवर अपने आहार के लिये मनुष्य का वध करता है, तो उसे भी अपहरण करके हम नहीं खा सकते। इन नियमों के कारण हम राक्षसों के लिये आजकल नरभक्षण असंभव सा हो गया है।" राक्षस ने कहा ।

"तो ऐसी हालत में पृथ्वी पर आये राक्षसों ने नरभक्षण कैसे किया?" माधवसेन ने पूछा।

"यही तो मैं बताने जा रहा हूँ। सुनो—यह बात सही है कि, उन राक्षसों ने नरभक्षण किया है। पर उनका कहना है कि उन्होंने किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं किया है। पृथ्वीपर

जाति-धर्म के नामपर, अथवा लूट-पाट के धंधों की वजह से मानव ही मानव का वध करता है। इस प्रकार जो आदमी मर गये थे उन्हीं को हमारे राक्षसों ने खाया है—यही उनका अपनी ओर से समर्थन था। अब उन के कथन की सच्चाई की जाँच करने मैं स्वयं पृथ्वी पर आया हूँ। दुर्भाग्यवश, उनका कहना सच निकला। मगर इसका सही कारण जानने के विचार से मैं और कुछ दिन यहाँ रुका रहा। अब वह कारण भी मैं समझ गया हूँ।"

"क्या है वह कारण?" राजाने कुतूहल से पूछा।

"पृथ्वी के समस्त राजाओं के भीतर प्राचीन काल के राक्षसों का थोड़ा-बहुत अंश अवश्य बाकी है। वे लोग स्वार्थी, क्रूर, अयोग्य और निर्बल हैं।" राक्षस ने कहा।

राक्षस की यह आक्रमक भाषा सुनकर माधवसेन क्रोध से भड़क उठा। फिर भी खुदको आश्वस्त करते हुए उसने कहा, "मैं तत्काल यह प्रमाणित नहीं कर सकता कि, मैं स्वार्थी और क्रूर नहीं हूँ। लेकिन इसी समय मैं यह ज़रूर प्रमाणित कर सकता हूँ कि, मैं निर्बल और असमर्थ नहीं हूँ। तुम अभी राक्षस का रूप धारण करो। मैं तुम्हें हरा सकता हूँ।"

"राक्षस के रूप में रहते हुए, कोई भी मानव मुझे हरा नहीं सकता। उस रूप में मेरी शक्ति अपार है। यदि तुममें हिम्मत हो, तो इसी रूप में तुम मुझे पराजित करो।" राक्षस ने कहा।

मगर माधवसेन ने उसकी बात नहीं मानी। "मैं मगध का राजा हूँ। इसलिए मैं अपने राज्य में किसी मानव पर तलवार नहीं चलाऊँगा। अपनी शक्ति प्रमाणित करने के लिए मैं अपने ही समान किसी मनुष्य को घायल करूँ यह मुझे शोभा नहीं देता। इसलिए यदि निश्चय ही तुम्हारे साथ युद्ध करना है तो कोई सही कारण होना चाहिए।" उसने अपनी ही टेक चलाई।

"तब तो एक और बात सुनो। मनुष्य ही मनुष्य का संहार करता है, तभी राक्षसों को नरभक्षण का मौक़ा फिर से मिल गया है। इस मौक़े से उनको वंचित न होना पड़े इसलिए मैं अक्सर पृथ्वी-लोक में आता रहता हूँ, और मनुष्यों को आपस में लड़ने-झगड़ने के लिए

उकसाया करता हूँ; उन में कलह पैदा करता हूँ। ऐसी हालत में मुझ जैसे को तुम अगर छोड़ दोगे तो तुम्हारे लिए वह ख़तरनाक न होगा? इसलिए अगर अब तुम युद्ध में मुझे पराजित करोगे तो मैं तुम्हारा आज्ञाकारी सेवक बन जाऊँगा।" राक्षस ने अपनी बात कही।

"तब तो ज़रूर मेरा पराक्रम देख लो।" यह कहते हुए माधवसेन ने अपनी तलवार खींच ली।

राक्षस भी अपनी तलवार खींच कर आगे बढ़ा। दोनों में लड़ाई शुरू हुयी और थोड़े ही समय में राक्षस की तलवार हाथ से छूटकर दूर जा गिरी।

इसके बाद राजाने भी तलवार दूर रखकर राक्षस के साथ द्वंद्व-युद्ध शुरू किया। अपने से अधिक शक्तिशाली राक्षस को माधवसेन ने कोई पेच लड़ाकर ऊपर उठाया और चक्राकार घुमाकर ज़मीन पर पटक दिया। राक्षस की आँखों के सामने अँधेरा छा गया। थोड़ी देर बाद वह सँभलकर किसी तरह खड़ा हो गया और बोला, "तुम्हारी शक्ति और युक्तियाँ ज़रूर सराहनीय है। मैं तुम्हारी सहायता अवश्य करूँगा। कहो, तुम मुझसे क्या चाहते हो?" यह पूछकर राक्षस अचानक एक भयंकर राक्षस के रूप में परिवर्तित हो गया।

"तुम युद्ध में मेरी सहायता करो। मैं परी पृथ्वी का चक्रवर्ती सम्राट बनकर सर्वत्र शांति स्थापित करूँगा।" माधवसेन ने कहा।

राजा की बातें सुनकर विकट अट्टहास करते हुए राक्षस बोला, "राजन्, क्षमा करो। मैंने जो वचन दिया, उसका पालन मैं नहीं कर पा रहा हूँ।

क्यों कि, तुम मेरी सहायता पाने की योग्यता नहीं रखते। तुम में शक्ति अवश्य है, मगर बुद्धि का तुम में एकदम अभाव है।" यह कहकर राक्षस वहाँ से अदृश्य हो गया।

बेताल ने यहाँ तक कहानी सुनाकर विक्रम से पूछा, "राजन, राक्षस राजा ने वचन-भंग क्यों, किया? उसकी सहायता से अगर माधवसेन समस्त पृथ्वी में शांति प्रस्थापित करता, तो राक्षसों को नरमांस खाने का मौका नहीं मिलेगा। यही कारण है क्या? इसके अलावा राक्षस ने न केवल वचन भंग किया, बल्कि माधवसेन से यह कहा कि, 'तुममें शक्ति है, बुद्धि नहीं।' यह तो राक्षस की ही बुद्धिहीनता है न?" इस संदेह का समाधान जानकर भी मौन रहोगे तो तुम्हारा सिर फटकर उसके टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे।

इसपर विक्रमार्क ने कहा—"राक्षस राजा अत्यंत बुद्धिमान और उदार है। अपनी जाति से निर्बल मानव समाज को राक्षसों से बचाने के लिए उसने समुचित प्रबंध किया। मगर पृथ्वी पर आने के बाद गहरी नींद सोने के लिए राक्षस-राज को मानव रूप में सोना ख़तरनाक लगा। इसका अर्थ है कि माधवसेन के राज्य में मानव के लिए सुरक्षा का काफ़ी प्रबंध नहीं है। यह ज़िम्मेदारी राज्य-शासन करनेवाले माधवसेन की ही है। इसलिए राक्षस-राजा ने उसे असमर्थ कहा। मगर माधवसेन ने राक्षस को पराजित कर अपनी सामर्थ्य का प्रमाण देना चाहा। अपने राज्य की अराजकता पर नियंत्रण न पा सकने वाला यह राजा विश्वशांति की बात कर रहा है? युद्ध होने से लाखों आदमी व सैनिक अपनी जानसे हाथ धो बैठेंगे। इस से राक्षसों का ही फायदा होगा। मगर यह बात माधवसेन के ध्यान में नहीं आ रही है। घूस के प्राण हरने में सकुचाने वाला राजा युद्ध शुरू करके लाखों के प्राण दाँव पर लगा रहा है —यह कहाँ की बुद्धिमानी है? इसलिए राक्षस राजाने माधवसेन की बुद्धि का परिहास किया।"

इस प्रकार विक्रमार्क का मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर वृक्षपर जा बैठा। (कल्पित)
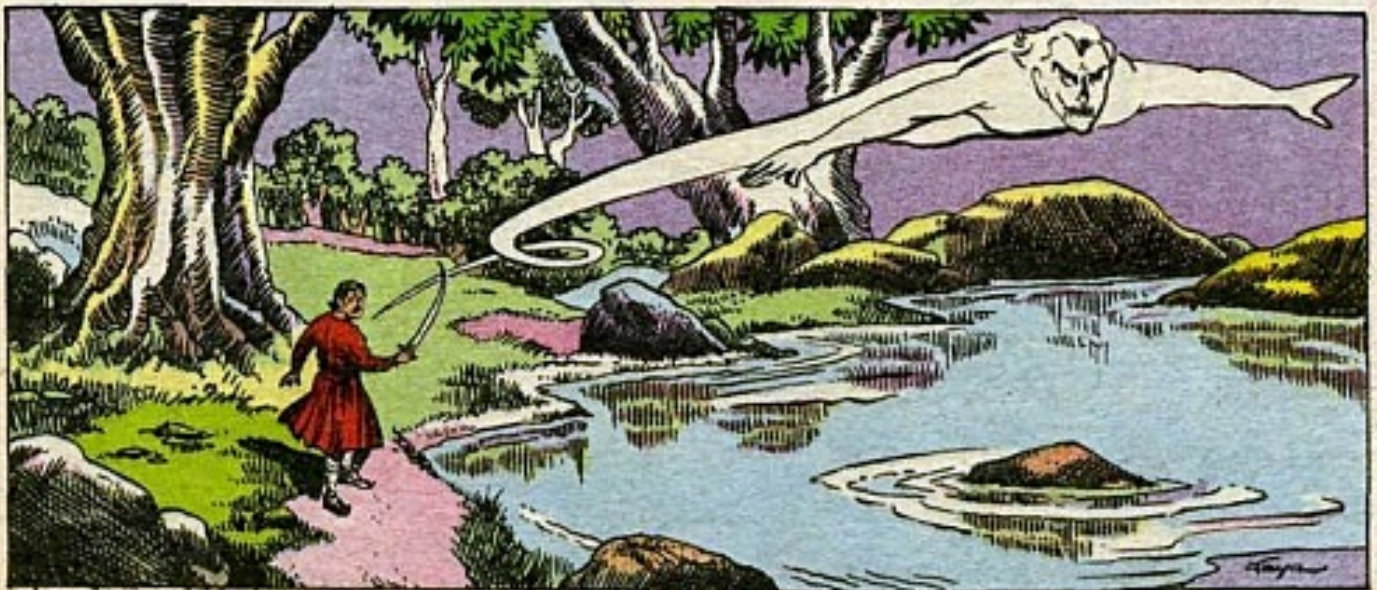
रत्नपूर के ज़मीनदार धर्मराज की कचहरी में अनेक गुमाश्ता और कर्मचारी थे। लेकिन वक्त पर उन्हें सलाह देनेवाला, उनकी ग़लतियाँ सुधार कर उनपर अमल चलानेवाला कोई नहीं था।

इस कमी की पूर्ति करने के लिए ज़मीनदार ने एक बुद्धिमान सलाहकार को नियुक्त करना चाहा।

यह समाचार सुनकर छः युवकों ने उन की सेवा में अपनी अर्ज़ियाँ भेज दीं।

निश्चित तिथि पर ज़मीनदार से मिलने के लिए छहों युवक उस के यहाँ आ पहुँचे। ज़मीनदार ने उनसे कहा, "तुम लोगों को मालूम ही होगा कि मुझे काव्य और अन्य ललित कलाओं से अपार प्रेम है। दूसरों की कविताएँ पढ़कर उनका रस लेते हुए आजकल मैंने खुद कुछ रचनाएँ करना शुरू किया है। अन्य काव्य पढ़ते पढ़ते उनकी रमणीय अनुभूति के साथ मेरे मन में भी उत्साह की उमगें उमड़ पड़ती है। मैंने अभी एक गीत लिखना शुरू किया है, तुम लोग सुन लो।" यह कहकर ज़मीनदार ने उन को छः चरण गाकर सुनाये।

युवक वह गीत सुनकर मौन खड़े रहे।

अब ज़मीनदार ने कहा, "अभी मुझे कुछ लिखने की स्फूर्ति हो रही है; मेरी अनुभूतियाँ खंडित न हो इसलिए आज तुम लोग चले जाओ। फिर अगले गुरुवार को आकर मुझ से मिल लो।"

ज़मीनदार से बिदा लेकर युवक उस समय चले गये और फिर गुरुवार के दिन हाज़िर हुए। ज़मीनदार ने उनसे कहा, "पिछली बार तुम लोग जब मुझ से मिले थे, तब मैंने तुम्हें एक गीत सुनाया था। वह गीत मैंने जिसपर लिखा था, वह कहीं खो गया है। क्या तुम में से किसी को वह

एस. मूर्ती

गीत याद है?"

युवक परस्पर एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। मगर उन में रामकीर्तन नाम का जो युवक था उसने निवेदन किया, "महाशय, मुझे वह गीत याद है।" और उसने वे छः चरण सही सही गाकर सुनाये।

रामकीर्तन की स्मरणशक्ति देखकर बाकी पाँच युवक दंग रह गये।

ज़मीनदार ने भी उसकी स्तुति करते हुए कहा, "रामकीर्तन तुम्हारी याददाश्त अपूर्व है। मैंने जो गीत लिखा, वह खुद मुझे याद नहीं है, लेकिन तुमने वे छहों चरण हूबहू सुनाये।"

उसपर रामकीर्तन ने विनयपूर्वक कहा, "महानुभाव, आप यदि क्षमा करें, तो एक निवेदन करना चाहूँगा।"

"कहो, क्या बात है?" विस्मय में आकर ज़मीनदार ने पूछा।

"हुज़ूर, यह गीत आपका रचा हुआ नहीं है।" रामकीर्तन ने कहा।

"मेरा लिखा नहीं है ? तब बताओ इसका रचयिता कौन है?" ज़मीनदार ने पूछा।

"मैंने यह गीत अपनी दादी के मुँह से सुना है। उस वक्त उसकी उम्र कोई अस्सी-बयासी होगी और मैं था चार-पाँच साल का बालक। यह गाना वह कभी कभार गा लेती थी।" रामकीर्तन ने कहा।

इसपर ज़मीनदार हँस पड़े और उन्होंने कहा, "रामकीर्तन, फिर भी तुम्हारी स्मृति अजीब है। तुम में प्रखर स्मरण शक्तिवाले की परीक्षा करने के लिए मैंने वह गीत सुनाया। तुमने चार-पाँच साल की आयु में जो गीत सुना था उसको आज भी याद करके सुनाया। मेरा सलाहगार जो बनेगा उसे बुद्धिमत्ता के साथ स्मरण शक्ति की भी आवश्यकता है। मेरी झूठी प्रशंसा करने के लिए तुमने यह नहीं कबूल किया कि, वह गीत मेरा लिखा हुआ है। साहसपूर्वक तुमने यह भी कह दिया कि, गीत का रचयिता मैं नहीं हूँ। इस में तुम्हारे स्वभाव की भी परीक्षा हो गयी। मैं तुम्हें ही अपनी कचहरी के काम के लिए नियुक्त कर रहा हूँ।"

काव्य कथाएँ:

शकुंतला १

हस्तिनापुर के राजा दुष्यंत एक दिन शिकार खेलने जंगल में गये हुए थे। उन्हें जब मालूम हुआ कि कण्व मुनि का आश्रम पास ही में है, तो अंगरक्षकों को थोड़ी दूर छोड़कर महाराज अकेले ही उनके दर्शनार्थ आश्रम में गये।

कण्व-मुनि उस वक्त आश्रम में नहीं थे। शकुन्तला अपनी सखियाँ मुनि-कन्याओं के साथ खेल रही थी। अचानक एक भ्रमर कहीं से आकर उसके गिर्द चक्कर काटते हुए तंग करने लगा। उस भ्रमर को भगाने की कोशिश करते हुए शकुन्तला ने सखियों को उससे सताये जाने के बारे में कहा। तब एक सखी शकुन्तला का मज़ाक करने के लिये बोल उठी—"शायद इस भ्रमर को पता नहीं कि हम उसकी हरकत के बारे में महाराज दुष्यंत से शिकायत करेंगी।"

उसी समय ये वचन सुनते हुए दुष्यंत उनके समीप जा पहुँचा। राजा को अचानक वहाँ देख वे सब चकित रह गयीं। आश्रम में कण्व-मुनि नहीं थे, इसलिये उन्हीं को राजा की आवभगत करनी पड़ी।

सब कन्याओं ने अत्यन्त श्रद्धा व भक्ति के साथ राजा को फल व पुष्प समर्पित किये; और आश्रम में विश्राम करने की उससे प्रार्थना की। शकुन्तला के सौंदर्य और विनयशीलता से राजा मुग्ध हो गया।

राजा को विदित हुआ कि कुछ जानवर आश्रम में ऊधम मचा रहे हैं। उसने उन हाथियों के और भैंसों के झुंडोंको वहाँ से भगाकर आश्रम में फिर शान्ति स्थापित की। इसके बाद थककर राजा जब आश्रम में लौट आया, तब शकुंतला ने बड़ी निष्ठा के साथ उस की परिचर्या की।

कुछ दिन यों ही गुज़र गये और इस बीच दोनों में अनुराग उत्पन्न हुआ। शकुन्तला के पोषित पिता आश्रम में न थे, इसलिये उन की अनुपस्थिति में राजा से विवाह करने में शकुंतला को कुछ संकोच-भावना महसूस होने लगी। दुष्यंत के समझाने पर उसने मान लिया और गांधर्व-विधि से दोनों का विवाह संपन्न हुआ। राजा दुष्यंत और शकुंतला के विवाह पर मुनि-कन्याएँ भी बहुत प्रसन्न थीं।

विश्राम के दिन कट गये । अब राजकाज संभालने के लिये राजधानी लौटना था । इसलिये दुष्यंत ने शकुंतला से कहा कि, कण्व मुनि के लौटने के बाद उनके आशिर्वाद लेकर वह शकुंतला को अपनी राजधानी बुलवा लेगा । फिर अपनी अँगूठी निकालकर दुष्यंत ने उसे शकुंतला की उँगली में पहना दिया ।

दुष्यंत ने सभी आश्रमवासियों से बिदा ली । शकुंतला ने बड़ी ही व्यथा के साथ उन्हें बिदा किया । राजा भी अत्यंत व्याकुल हृदय से वहाँ से हस्तिनापुर चले गये ।

कुछ दिन बाद कण्व — मुनि आश्रम लौट आये । शकुन्तला ने सोचा कि, उनकी अनुपस्थिति में अपने दुष्यंत के साथ विवाह की बात सुनकर कण्वबाबा क्या कहेंगे । इस डर से भयभीत हो वह कांप उठी और महर्षि के चरणों में सिर रख दिया ।

(सशेष)

तीन सूत्र

किसी गुरुकुल में एक गरीब विद्यार्थी पढ़ रहा था। उसका नाम था रघुनाथ। रघुनाथ होनहार और सुशील युवक था। वह नेक और मेहनती था। पर पढ़ाई में उसकी गति बड़ी मंद थी। आचार्य ने अन्य विद्यार्थियों के साथ रघुनाथ को भी पढ़ाया; लेकिन दुर्भाग्यवश वह पढ़ाई में एकदम कच्चा निकला। जब बाकी सभी विद्यार्थी अपना विद्याभ्यास पूरा करके घर लौट रहे थे, तब आचार्य ने उस गरीब, निर्धन रघुनाथ से कहा, "वत्स, तुम्हारे साथ जो विद्यार्थी पढ़ रहे थे, वे सब पढ़कर अब पंडित बन चुके हैं। मैं यह नहीं कह सकता कि, दुर्भाग्य तुम्हारा है कि मेरा, मगर तुम तो पढ़ाई में एकदम कच्चे निकले। पता नहीं मैं जब पढ़ाता तो तुम्हारा ध्यान किस तरफ होता था। बार बार समझाने पर भी तुम कोरे के कोरे रह गये। ऐसा मंदबुद्धि छात्र अब तक मुझे नहीं मिला। ख़ैर, जो हो गया सो हो गया, अब मैं तुमको तीन सूत्र बता देता हूँ। तुम्हारा प्रारब्ध अगर प्रबल हो तो इन सूत्रों के आधार से तुम्हारी किस्मत खुल सकती है।" यह कहकर आचार्य ने उसे निम्नलिखित तीन सूत्र सुनाये।

१) चलते चलते जाने पर वही आएगा।

२) पूछते पूछते रहनेपर वही मालूम होगा।

३) जागते रहनेपर मृत्युभय न रहेगा।

आचार्य के बताये ये तीन सूत्र अच्छी तरह रटकर रघुनाथ घर की ओर निकल पड़ा। बीच रास्ते उसके मनमें वेदवती नगर देखने की इच्छा जागृत हुई। एक जगह बैठकर पढ़ने-गुनने की उसकी तबीयत नहीं थी, पर लोगों से बातचीत करने की कला में वह प्रवीण था। तरह तरह का ज्ञान प्राप्त करनेकी प्रखर प्रेरणा उसमें थी। नये नये स्थान देखने की चाह उसमें बराबर बनी रहती थी। इसलिये घर लौटने का विचार छोड़कर वह

(२५ वर्ष पूर्व चन्दामामा में प्रकाशित कहानी)

रास्ता पूछते पूछते वेदवती नगर की ओर चल पड़ा

रघुनाथ को कोई कल्पना नहीं थी कि नगर कितनी दूरीपर है। नगर खूब दूर था। किराये की गाड़ी पर जाने के लिये उसके पास पैसा नहीं था; इसलिये वह बड़ी लगन से पैदल ही चलता रहा और कुछ महीनों बाद वह गरीब शिष्य रघुनाथ वेदवती पहुँचा। आचार्य के द्वारा बताया गया पहला सूत्र—चलते चलते वही आएगा—उसके प्रति सच्चा प्रमाणित हुआ।

वेदवती बहुत ही बड़ा नगर था। रघुनाथ के मनमें विचार उठा—'जब मैं इतने कष्ट उठाकर इतनी दूर आ गया हूँ, तब कोई छोटा-मोटा काम करके भी क्यों न हों-थोड़ा और समय यहीं रहूँ तो श्रम सार्थक होंगे।' यह निर्णय करने के बाद थोड़ीसी तनख्वाह पर उसने एक छोटीसी नौकरी प्राप्त की। फुरसत के समय शहर के अलग अलग विभागों में घूमकर नगर की विशेषताएँ जान लेता रहा। 'पूछते पूछते वही मालूम होगा।' यह दूसरा सूत्र भी रघुनाथ के लिये सच्चा साबित हुआ।

अनेक लोगों से बातें करने के बाद रघुनाथ को उस नगर के बारे में एक ख़ास बात मालूम हुई। वह विशेषता यह थी कि, उस नगर का शासन कोई राजा नहीं करता था, बल्कि एक रानी करती थी। वैसे उस के चार पाँच विवाह हुए थे, फिर भी वह अभी कुमारी कन्या ही बनी रही। कारण यह था कि—उससे विवाह करनेवाला प्रत्येक युवक विवाह की ही रात बडे विचित्र ढंग से मर चुका था। इस प्रकार लगातार पाँच-छः युवकों के मरने के बाद उसके साथ विवाह करने के लिये कोई भी राजकुमार साहस नहीं कर सका।

रघुनाथ ने जब यह कहानी सुनी तब उसे अपने गुरुके कहे तीसरे सूत्र का स्मरण हुआ कि, 'जागते रहनेवाले को मृत्यु का भय नहीं होता।' आचार्य के वचनपर अब रघुनाथ को गहरा विश्वास हो गया था। इसलिये उसने रानी के साथ विवाह करने का निश्चय किया।

रघुनाथ सीधे एक दिन राजमहल में पहुँचा और उसने मंत्रियों को सुनाया कि, वह रानी के साथ विवाह करना चाहता है। मंत्री बहुत प्रसन्न हुए और विवाह का मुहूर्त उन्होंने निश्चित किया।

विवाह के दिन रघुनाथ को ठाठबाट से राजोचित वस्त्र पहनाये गये और वैभवपूर्वक उसका विवाह संपन्न हुआ । विवाह के लिए आसपास के राज्यों के राजा बड़ी संख्या में उपस्थित थे । वे अपने साथ अमूल्य भेंट-वस्तुएँ लाये थे । विवाह के उपरान्त शाही भोजन का प्रबंध था । सब आगंतुकों ने यथेच्छ भोजन किया उसके बाद एक सांस्कृतिक कार्यक्रम भी आयोजित था । सब का खूब मनोरंजन हुआ ।

उस दिन रात को शयन गृह में प्रवेश करते ही रघुनाथ ने अपने राजवस्त्र उतारकर एक तरफ़ रख दिये, अपनी तलवार दीवार से सटकर रख दी, शयनकक्ष के बाहर शोभा के लिये रखे केले के तने से पत्ते काट दिये और खाली तने को अपनी शय्या पर रखकर ऊपर से चादर उढ़ा दी और वह खुद पास ही एक खम्भे की ओट में खड़ा हो गया । मृत्युभय रखनेवाले को जागते रहना ज़रूरी है, इसलिये वह जागता खड़ा रहा । नींद न आए इसलिए खड़े खड़े वह ध्यान करता रहा । उसे बार बार अपने गुरु का तीसरा सूत्र याद आ रहा था । मन-ही-मन वह गुरु की कृपा की याचना कर रहा था ।

थोड़ी ही देर बाद छत से एक नाग शय्या के पासवाले खम्भे से होकर तेज़ी से रेंगता हुआ आया । शय्या पर रखे केले के तने को ही मनुष्य समझकर उसने डस लिया । ठीक उसी समय रघुनाथ ने उछलकर नाग पर तलवार चलायी । नाग का सिर कटकर दूर जा गिरा । इस के बाद मरे सर्प और केले के तने को दूर फेंककर वह बड़ी निश्चिन्तता से सो गया ।

दूसरे दिन सुबह वर को जीवित देखकर मंत्रियों के आश्चर्य और आनन्द की कोई सीमा नहीं रही ! उसी दिन मंत्रियोंने रघुनाथ का राज्याभिषेक किया । शिक्षादीक्षा में कच्चा रहनेपर भी आचार्य के वचनोंपर श्रद्धा व भक्ति रखने के कारण गरीब शिष्य रघुनाथ वेदवती नगर का राजा बना और उसने कई वर्षतक सुखशान्ति से रहकर राज्य भी सम्हाला ।
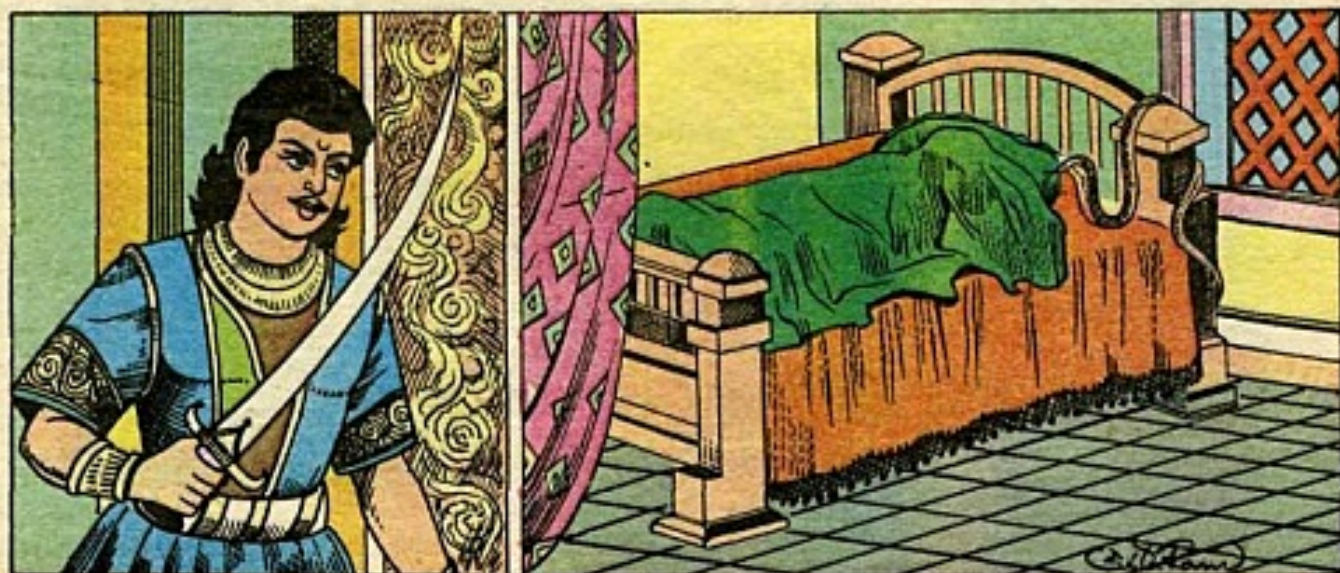
रिश्वत

शिवपुरी राज्य में शत्रु का बहुत अधिक बोलबाला हो गया। उस देशके राजा ने अपनी राजधानी की रक्षा के लिये नगर के चारों ओर पत्थरों से एक ऊँची दीवार बनवायी और प्रवेश द्वार में ठोस लोहे के दरवाज़े लगवा दिये।

इसके बाद पत्थर की दीवार और लोहे के दरवाज़े की मज़बूती की परीक्षा करने के लिये हाथियों को उनसे टकरवा दिया। तोपों के गोले उनपर चलाकर देखे। पर उनपर कोई परिणाम नहीं हुआ, और वे ज्योंका त्यों बने रहे; टूटे नहीं !

राजा अत्यन्त प्रसन्न होकर अपने सेनापति तथा मंत्रियोंसे बोले, "यह दीवार और दरवाज़ा शत्रुओं के लिये दुर्भेद्य हैं। कोई नगर में वे प्रवेश नहीं कर सकेंगे।"

राजा की बातें सुनकर मंत्री मुस्कराकर चुप रह गया।

थोड़े दिन बाद मंत्रीकी सूचनासे राजा उसके साथ दोपहर शहर से बाहर भ्रमण करने गये। दोनों ने वेष बदला हुआ था। सूर्यास्तपर रिवाज़ के अनुसार दरवाज़ा बंद कर दिया गया। थोड़ी देर बाद राजा व मंत्री प्रवेशद्वार के पास पहुँचे और वहाँ पहरा देनेवाले सिपाहियोंके सरदार को दरवाज़ा खोलने को कहा।

सरदार ने कहा,"इस समय के बाद सेनापति की आज्ञा के बगैर कोई भी नगर में प्रवेश नहीं कर सकता।"

इसपर मंत्रीने उसको अलग ले जाकर उसके हाथ में सोने के सिक्के धर दिये और कहा, "जाने भी दो न अंदर। हमें बहुत ही महत्त्व के काम से अंदर जाना है।"

सिक्के लेकर सिपाहियों के सरदार ने पहरेदारों को प्रवेशद्वार खोलने का आदेश दिया।

यह देखकर राजा विस्मय में आ गया। तब मंत्री ने कहा,"प्रभु, हाथियों और तोपों से भी शक्तिशाली एक वस्तु है। वह ज़रूर दरवाज़ा खोल सकती है। वह चीज़ है—रिश्वत ! समझ गये न महाराज ?"

कुंभक के रेवड़ में पैदा हुए राक्षसी बैलों के अत्याचारों से तंग आकर जनताने उनके बारे में मिथिला-नरेश से शिकायत की। राजा ने कुंभक को बुलवाकर उसे चेतावनी दी—"जनता हम से शिकायत कर रही है कि तुम्हारे बैल उनके प्राण लेने पर तुले हुए हैं। तुम एक प्रतिष्ठित परिवार के हो, साधारण नागरिक नहीं हो। तुम्हारे पास काफ़ी जनशक्ति है। दस पंद्रह लोगों की मदद से लड़नेवाले उन बैलों को काबू में रखो, वरना उनको बधिया दो। फिर भी अगर वे उच्छृंखल बन जायें तो उनको जंगल में भगा दो। अगर इसके बाद लोगों ने शिकायतें कीं तो उसका बुरा परिणाम होगा। सावधान होकर बैलों के अत्याचारों को रोको।"

कुंभक की समझ में न आया कि क्या किया जाय। उन घमण्डी बैलोंपर नियंत्रण पाना उसके लिये असंभव सा हुआ था। इस प्रयत्न में बहुत से लोग घायल हो रहे थे। कुछ तो मर भी गये थे! इसलिये राजा ने कोई दूसरा उपाय न पाकर ढिंढ़ोरा पिटवा दिया कि, जो भी कोई उन दुष्ट बैलोंपर विजय प्राप्त करेगा, उसके साथ अपनी पुत्री नीला का विवाह किया जायेगा।

ढिंढ़ोरा सुनकर चारों तरफ़ से गोप युवक वहाँ आने लगे। उनका विचार था कि जो लोग गायों के बीच ही अपना जीवन व्यतीत करते हैं, उन्हें बैलोंपर नियंत्रण करना कौन बड़ी बात है! इसलिये वे लोग इस प्रलोभन में आ गये कि बड़ी आसानी से एक सौंदर्यवती पत्नी के रूप में प्राप्त होगी।

इस प्रकार इकट्ठा हुए लोग अपने अपने ढंग

६. नीला-कृष्ण का विवाह

से डींग मारने लगे। एकने कहा कि वह बैलों के सींग पकड़ कर उनको वश में कर लेगा। दूसरा कहने लगा—उन्हें गिराकर उनके नथुनों में वह रस्सी पिरो देगा। इस तरह शेखी बघारते गोपकों ने ताल ठोंके, हो हल्ला मचाया और दौड़ लगाये। सब में अपूर्व उत्साह था। बैलों को काबू में करने के लिए लोग अलग अलग प्रकार की तरकीबें सोचने लगे। उनकी दृष्टि से यह कोई बहुत मुश्किल काम तो था नहीं।

ढिंढ़ोरा सुनकर कुंभक ने अपने दूत नंदगोप के पास भेजे। दूतों ने जब उन सात बैलों के मचाये हाहाःकार के बारे में बताया, तब नंद, यशोदा और उनके साथ कृष्ण-बलराम भी चल पड़े। उनके पीछे कुछ और गोप-कुमार भी हो लिये।

कुंभक ने अपनी बहन और बहनोई की अगवानी करके स्वागत किया। कुंभक की पत्नि धर्मदा ने यशोदा का आदर-सत्कार किया। कुंभक-पुत्र श्रीधाम ने बलराम और कृष्ण को गले लगाया। बादमें उन्होंने सबको आसन देकर उन्हें बिठाया। बड़े प्रेम से बातों का सिलसिला चला। कुंभक और धर्मदा बड़े प्रसन्न दिखाई देते थे। कृष्ण और बलराम को अपने बीच पाकर वे फूले न समाये। उनके स्वागत में गीत गाये गये। खीर, घी आदि के साथ मिष्टान्न परोस कर खाना खिलाया। तरह तरह के बने स्वादिष्ट व्यंजन कुंभक ने खूब प्यार से सब की थालियों में विपुल मात्रा में परोसे। आवभगत में किसी बात की ज़रा भी कसर नहीं रखी गयी।

उस रात को उन राक्षसी बैलों ने कृष्ण-बलराम का आगमन भाँप लिया और वे एकदम उच्छृंखल हो उठे। गर्भिणी गायोंपर उन्होंने सींग चलाये। बाद में कुंभक के अहाते में प्रवेश करके रंभाते हुए खुरों से धरती कुरेदने लगे। फिर मिट्टी के बर्तनों और मटकों को तोड़ दिया। दीवारों पर भी उन्होंने सींग और खुर चलाये, अन्न भांडारों को तहसनहस कर दिया, गाड़ियाँ तोड़-मरोड़ दीं, मंडपों को नीचे गिरा दिया, और किवाड़ तोड़ डाले। औरतों और बच्चों को उन्होंने डराया। इस प्रकार सर्वत्र हाहाःकार मच गया। बाहर से आये गोप भी यहाँ-तहाँ छिप गये। बैलों के ये उत्पात उन के

लिए एकदम नये थे। उन्होंने सोचा इनको काबू में करना कोई सरल काम नहीं है। ऐसा ही चलता रहा तो अब सर्वनाश समीप है।

सबेरा हुआ। कुंभकने सब गोपकों को बुलवाया। अपनी पुत्री को अलंकृत करवाकर उनके सामने खड़ा किया; और कहा, " बैलों पर काबू पाने के हेतु आये हुए गोपकुमारों, तुम लोग देखही रहे हो ये बैल कैसे दिग्गज जैसे, सिंह जैसे हैं। इन पर अंकुश चलाने के लिये हमने जो भी उपाय किये, सब के सब असफल रहे। हम यदि इनपर नियंत्रण नहीं करेंगे तो राजा हमें दण्ड देंगे। इसलिये आप जैसे पराक्रमी लोगों को मैंने पाचारण किया है। तुम में से जो कोई इन बैलोंपर काबू कर जाएगा, उसके साथ मैं अपनी इस कन्या का विवाह रचाऊँगा।"

कुंभक के इस भाषण से लोग संकोच में पड़ गये। नीला को देखकर एक तरफ़ उनके मन उत्साह से उमड़ रहे थे, तो दूसरी तरफ़ बैलों के विचार से ही उनके कलेजे थर्रा रहे थे। इसलिये कोई भी किसी निश्चित निर्णय पर नहीं पहुँच पा रहे थे।

ऐसी स्थिति में नन्द के जातिवाले घोषवंत नामक एक गोप ने कहा,"इन कम्बख्त बैलों को मैं आज मार न डालूँ तो मेरे बल एवं पराक्रम किस काम के ? तुम लोग देखते रह जाओ ! मैं एक ही झपटे में उन्हें मार गिराता हूँ।" यह कहकर ताल ठोंककर वह बैलोंकी ओर बढ़ा। उसका एक एक कदम वीरता और आत्मविश्वास से भरा लग रहा था। जोश में आने से उसकी आँखें लाल-पीली दिखाई दे रही थी। उसकी पिंड़लियों के और बाहों के स्नायु उभर आये थे। शिकार पकड़ने निकले व्याघ्र जैसी उसकी चाल सावध थी।

अन्य लोग खेत की मेड़ों, मकानों की छतों और पेड़ की शाखाओं जैसे ऊँचे स्थान पकड़कर तमाशा देख रहे थे।

घोषवन्त ने आगे बढकर एक बैल के माथे पर ज़ोर से अपनी मुठ्ठी से प्रहार किया। प्रेक्षकोंने हर्षनाद किये। मगर दूसरे ही क्षण देखते हैं, सातों बैलों ने उसे घेर लिया। कृष्ण ने व्यथित होकर सोचा,"इसने ज़्यादा आत्मविश्वास में आकर क्यों यह संकट मोल लिया ? अब ये बैल क्या इसे

उसको मना करने की कोशिश की ! उनको शक था कि इन बैलों का सामना करना कृष्ण और बलराम के लिए कहाँ तक संभव है! अगर उनकी अवस्था भी घोषवन्त-सी हुई तो? नंद-यशोदा को बड़ी चिन्ता हुई। तरह तरह की दुष्ट शंकाओं से उनका मन भर गया।

मगर उनकी ओर ध्यान दिये बिना कृष्ण आगे बढ़ा। बहुत ही क्रुद्ध होकर उसने अपनी मुट्ठी बाँध दी थी। यह देखकर उन सातों बैलोंको-जो सहोदर भाई थे-अपनी पुरानी शत्रुता का स्मरण हो आया। वे भी क्रोधावेश में आ गये और उन्होंने एकसाथ कृष्णपर धावा बोल दिया। कृष्ण तो तैयार ही था। एक एक बैल जैसे उसके समीप आया, कृष्ण ने उसके माथेपर अपनी हथेली से प्रहार करके उसी वक्त उस बैल के सींग पकड़कर उसे दूसरे बैल पर ढकेल दिया। दो-एक बैलों की पूँछें पकड़कर उन्हें हवामें चक्र जैसा घुमाकर कहीं झोंक दिया। कुछ के माथे तथा पीठ पर प्रहार करके उन्हें भयभीत किया। यह देख प्रेक्षक विस्मय में आ गये। यह युद्ध कृष्ण के लिये एक खेल मात्र था, मनोरंजन था। उन प्रेक्षकों में नीला भी थी। वह प्यार और लज्जा भाव से कृष्ण को निहार रही थी। उसको यों देख कृष्ण को भी बड़ा आनन्द आ रहा था।

अन्त में मानों खेल समाप्त करने के लिये कृष्ण ने प्रत्येक बैल के सिरपर एक एक मुक्का मारकर उन सब के सिर फोड़ दिये। बैलोंके सिर व नथुनों से खून बहने लगा। उन सबने धराशायी

जीवित छोड़ भी देंगे ?" इतने में बैलोंने उसे सींगपर उठाकर नीचे ज़मीनपर पटक दिया। अपने खुरों से लात मारकर दूर फेंक दिया।

इस प्रकार घोषवन्त को हराकर बैलोंने प्रेक्षक गोपकों की ओर अपना रुख मोड़ लिया। अब प्रेक्षकों में हाहाःकार मच गया। वे भागने लगे। बैल भी सींग मारते, खुर चलाते, सब को तितर बितर करके भगाने लगे। लोगों में भगदड़ मच गयी।

बलराम से कृष्ण ने कहा, "ये साधारण बैल नहीं हैं। बैलों में इतना साहस व ऐसी ईर्ष्या होना असंभव है। मैं स्वयं अब कुंभक की सहायता करूँगा।" और कृष्ण उन लड़ाकू बैलों की ओर दौड़ने को हुआ, तब नंद-यशोदाने चिल्लाकर
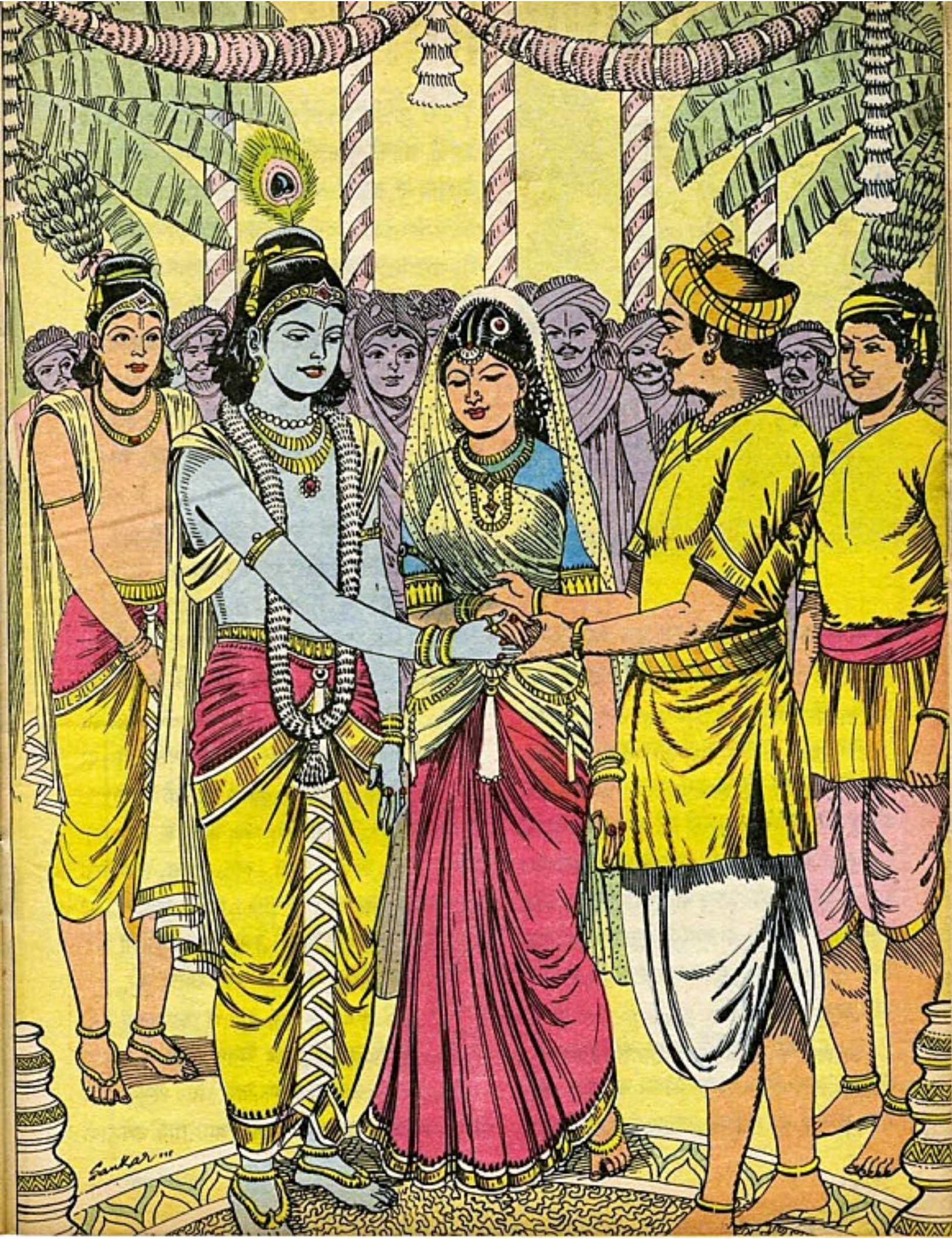
हो अपने खुर हवामें झाड़ते हुए प्राण त्याग दिये। इस प्रकार कृष्ण ने कालनेमी के सातों पुत्रोंका संहार कर डाला।

नन्द और यशोदा ने दौड़कर कृष्ण को गले लगाया। अपने पुत्र के इस प्रकार पराक्रमी होने की उन्होंने कल्पना तक नहीं की थी। क्षण भर के लिए वे दोनों अवाक् रह गये कुंभक नीला का हाथ पकड़कर उसे कृष्ण के पास ले गया और नीला का हाथ कृष्ण के हाथ में देकर बोला, "यह कन्या तुम्हारे पराक्रम का उपहार है। तुम इस का पाणिग्रहण करो।"

इस के बाद कुंभक ने कृष्ण को वस्त्र और आभूषण प्रदान किये। नन्द-यशोदा को वस्त्र और अन्य गोपकों को विविध उपहार दिये, फिर वह नन्द से बोला, "बहनोईजी, आपका पुत्र बहुत ही शूर है, उसीकी कृपा से हम एक भयानक विपदा से मुक्त हो गये हैं। साथ ही मेरी प्रतिष्ठा में भी आँच नहीं रही। अब हम लोग सुख और शांति से अपना जीवन यापन कर सकेंगे। मैं उपहार-स्वरूप नीला को हज़ारों गायें सौंप रहा हूँ। कृपया स्वीकृति दीजिए। मैं अपनी प्रसन्नता के लिए ये सब दे रहा हूँ।"

"पगले, मेरे पास गायों की अपार संपदा है। कृष्ण के जन्म से लेकर हमारे रेवड़ों में गायों की संख्या आश्चर्यकारक ढंग से बढ़ रही है। अपरिमित दूध हमको प्राप्त हो रहा है। उस दूध से अपार घी हम को मिल रहा है। हम सब बहुत ही सुखी जीव हैं।" नन्द ने समझाया।

सब ने एक दिन वहाँ महोत्सव मनाया। बैलों के अत्याचारों का अंत होनेसे सब को अतीव संतोष था। सब गा-गा कर नाच रहे थे, नाच-नाच कर गा रहे थे। ऐसा आनन्द-महोत्सव अब तक किसी ने अपनी आँखों से नही देखा था। दूसरे दिन नंद, यशोदा और नीला के साथ श्रीधाम को लेकर कृष्ण और अन्य सब वृंदावनवासी वृंदावन लौट गये। इसके बाद वे अपने दिन सुखपूर्वक बिताने लगे। नवयौवन में प्रवेशित कृष्ण रेशम के पीले वस्त्र धारण कर, पगड़ी में मयूर पंख खोंसकर, कंठ में वनमालाएँ पहनकर, मुरली बजाते सर्वत्र विहार करते थे।

एक दिन बलराम व कृष्ण गायें चराने यमुना किनारे गये थे। वहाँ एक वटवृक्ष था। गायों को

चरने के लिए छोड़कर दोनों उस वृक्ष के नीचे बैठ गये। अन्य गोपालक खेलों में मग्न हो गये।

ऐसे में वामदेव व भारद्वाज नाम के दो मुनि तीर्थाटन करते करते वहाँ से गुज़र रहे थे। उस विशाल वटवृक्ष की परिक्रमा कर उन्होंने उस वृक्ष को प्रणाम किया। पास खेलनेवाले गोपालकों से उन्होंने पूछा, "बेटा, स्नान करने के लिए यहाँ कोई अच्छा सा घाट है, जहाँ मगरमच्छ व सर्पों का भय न हो?"

गोपबालक एक दूसरे के चेहरे देखते हुए, शरारत करके बराबर कहने लगे, "मैं कुछ नहीं जानता, उससे पूछ लो!" यह देख कृष्ण ने सोचा, ये नटखट बच्चे मुनियों से शरारत कर रहे हैं। वह उठकर उन के पास जाकर बोला, "देखिये, ये लड़के कुछ भी नहीं जानते। मैं आपको एक बढ़िया घाट दिखला दूँगा। आप दोनों अपने धार्मिक कृत्य समाप्त कर यहाँ आ जाइये। मलाई व दही मिलाया बासी भात हम छींको में रखकर लाये हैं। आप लोग खुशी से वह खा सकते हैं। अगर भात नहीं चाहते, तो हम गाय को दुहकर धारोष्ण दूध आप दोनों को पिलाएँगे। मैं नन्दपुत्र कृष्ण हूँ और यह मेरे भाई बलराम है। हम दोनों आपकी भरसक सहायता करेंगे। यहाँ के जलचरों के प्रति ज़रा भी भय मन में मत रखिए। कोई तिरछी नज़र से आपकी ओर नहीं देख सकेगा। आप स्नानानन्द का उपभोग करें।"

अपने साथ बात करनेवाले बालक का तेज
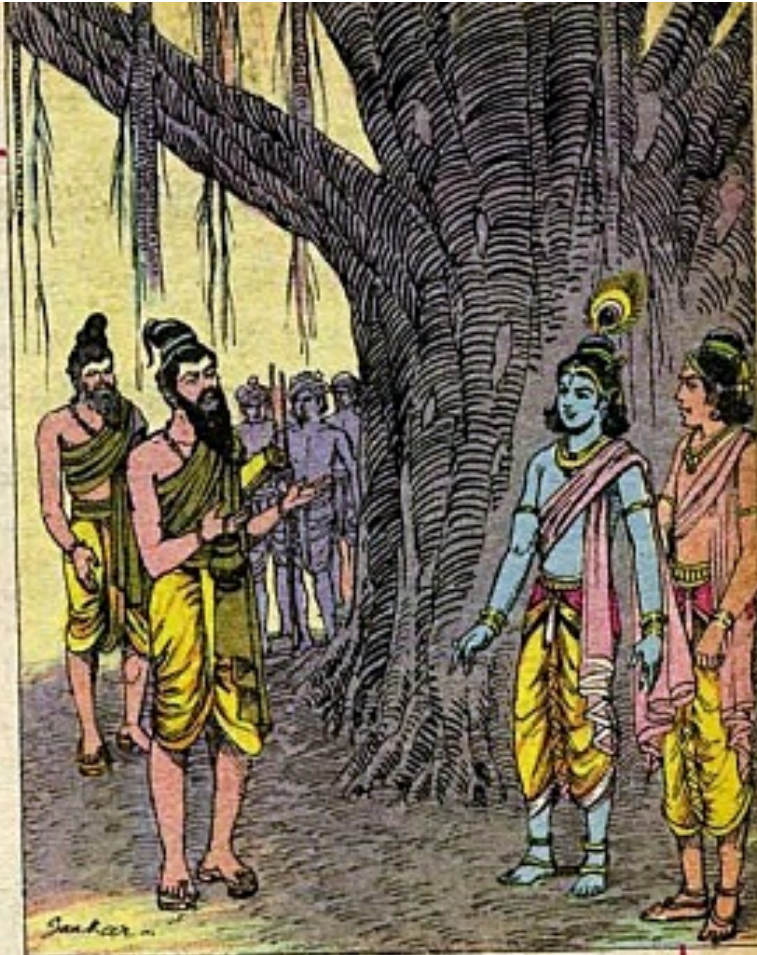
देखकर मुनि सोचने लगे, 'गोपकुल में ऐसा बालक कैसे उत्पन्न हुआ है? आश्चर्य में आकर पलभर आँखें बन्द कर वे समाधि अवस्था में पहुँचे और कृष्ण के बारे में सब जान लिया। उन्होंने कृष्ण से कहा, "वत्स, यह हमारा बड़ा सौभाग्य है। जिस को ब्रह्मा आदि देवता पूरे प्रयत्न करके भी देख नहीं सकते, ऐसे आप के दर्शन हम को आज अनायास हो गये। आज हमारा जन्म सार्थक हुआ। तुम्हें पुत्र के रूप में पानेवाले माता-पिता धन्य हैं।" इस प्रकार कृष्ण की प्रशंसा करते हुए दोनों अपने पथ चलते बने।

इस प्रकार बलराम व अन्य गोप बालकों के साथ गायों के पीछे घूमते, हँसते, खेलते, गाते कृष्ण अपना जीवन बड़े सुखपूर्वक बिताते रहे।

कृष्ण एक दिन यमुना किनारे चलते चलते ज़रा ज्यादाही दूर निकल गया। एक स्थानपर उसने एक भयानक तालाब देखा। तालाब ख़ासा विशाल था। समुद्र की लहरों की भाँती इस तालाब की लहरें उछल रहीं थीं। लहरों पर घनी भांप छायी हुई थी। और समीप के तटवर्ती पेड़ व लताएँ बुरी तरह झुलस गयी थीं। तालाब की लहरें भयानक रूपमें तट को छू रहीं थीं। ऐसा लग रहा था कि, उस स्थान पर कोई पक्षी या प्राणी जीवित नहीं रह पा रहा था। एक प्रकार का भयानक सन्नाटा वहाँ छाया हुआ था।

कृष्ण ने कालिया नाम के सर्प के बारे में यह सुन रखा था—इस महासर्प के मुँह से अग्नि-ज्वालाएँ फूट निकलती हैं। यह सर्प गरुड़ से भी नहीं डरता। वह एक तालाब में छिपा रहता है। कोई भी तालाब के पास फटक नहीं सकता।—अभी इस तालाब को देखकर कृष्ण को ये सारी बातें याद हो आयीं और उसने जान लिया कि यही वह तालाब है। कृष्ण ने सोचा कि, इस तालाब में प्रवेश कर उस सर्प का मद चूर-चूर कर यह तालाब मवेशियों के लिए उतरने योग्य कर देना चाहिए। इस कार्य से और भी एक लाभ होगा—वह यह कि, कालिया के परिवार से संबधित अनेक सर्प बन में संचार करते हुए वृंदावन के कुछ प्रदेशों को भी विपदाजनक बना रहे हैं। यदि उचित रूप में कालिया का मर्दन हो जाएँ, तो इन छोटे-मोटे सर्पों के खेल समाप्त हो जाएँगे। यह काम किसी भी हालत में संपन्न करना ही चाहिए। ऐसी हालत में विलम्ब क्यों? 'शुभस्य शीघ्रम्।' इस प्रकार विचार कर कृष्ण तालाब के किनारे पहुँचा। तालाब के जल से सटकर एक कदंब वृक्ष फैला हुआ था। उसपर चढ़कर तालाब में कूदने का निश्चय कृष्ण ने किया। उसने किसी से भी इस संबंध में परामर्श नहीं किया। अपने साथ रखे रस्सों को वहीं कहीं फेंक दिया। अपना डंका तथा मुरली को किसी के हाथ में दे दिया। सिर पर से मोरपंख निकालकर जूड़ा बाँध दिया। और कदम्ब वृक्षपर चढ़कर ऊँची आवाज़ देकर वह तालाब में कूद पड़ा। कृष्ण जहाँ पर पानी में गिरा वहाँ तालाब का जल बड़ी ऊँचाई तक उछल पड़ा। (क्रमशः)
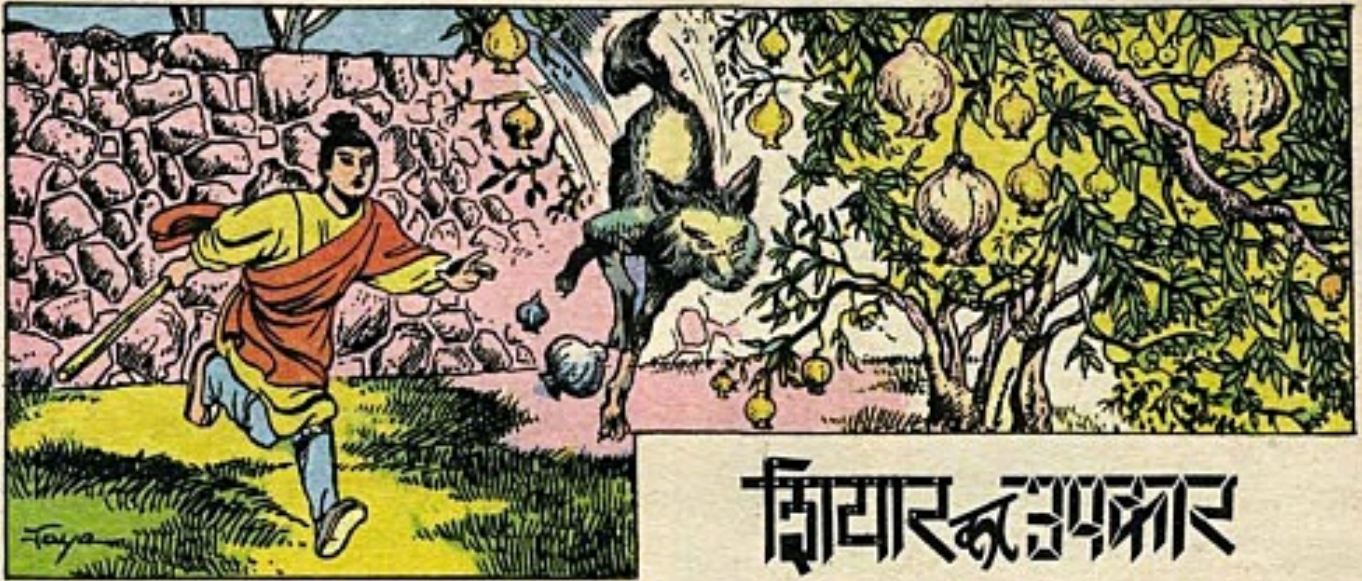
सियार का उपकार

प्राचीन काल में चीन के एक प्रदेश में अंटाक नाम का एक बहुत ही निर्धन व्यक्ति रहा करता था। धन-संपत्ति के नाम पर उसके यहाँ मात्र एक दाड़िम का वृक्ष था। अंटाक का सारा समय बस उस वृक्ष की देखभाल व सुरक्षा में ही बीत जाया करता था।

नटखट लड़के कभी उसके पिछवाड़े से झाँककर देखते तो अंटाक आगबबूला हो उठता और उन्हें गालियाँ देता, यदि वे उस वृक्ष को हाथ भी लगा देते तो वह उन्हें पीट देता।

एक साल दाड़िम-वृक्ष में खूब फल लगे और जब वे पकने को हुए, तब अंटाक अपना पूरा समय उस वृक्ष की देखभाल और उसकी रखवाली में गुज़ारने लगा। एक रात उसे बड़ी ज़ोर से नींद आ गई। जब उसकी आँख खुली तो वह क्या देखता है कि वृक्ष के कुछ फल ग़ायब हैं।

इसी प्रकार दूसरे दिन भी कुछ फल ग़ायब हो गए।

तीसरे दिन चोर को पकड़ने का निश्चय कर अंटाक ने सो जाने का स्वाँग रचा, उसी समय उसने एक सियार को दीवार फाँदकर अंदर आते देखा। सियार ने जब पेड़ पर छलाँग लगाई, अंटाक ने लपक कर उसकी पूँछ पकड़ ली। लेकिन सियार उसके हाथ से बच कर निकल भागा।

इसके बाद अंटाक ने सियार को पकड़ने की एक तरक़ीब सोची। उसने उस दीवार पर उधर गोंद चिपका दिया जिधर से सियार आया जाया करता था। सियार ने जब उस दीवार को फाँदकर पार करना चाहा तो वह वहीं चिपक गया।

"अरे भाई, सुनो, यदि तुम मुझे छोड़ दो तो मैं तुम्हारा बड़ा उपकार करूँगा। तुम चाहो तो मैं तुम्हारा विवाह एक राजकुमारी के साथ करा दूँगा।" सियार ने कहा।

चीनी लोक कथा

"तुम भी मज़ाक उड़ाते हो ? मैं तो जन्म से ही दरिद्र हूँ। इसलिए राजा क्या, ग़रीब से ग़रीब व्यक्ति भी अपनी लड़की मेरे साथ ब्याहने को तैयार न होगा ।" अंटाक ने कहा ।

लेकिन सियार ने अंटाक को विश्वास दिलाते हुए कहा कि वह राजकुमारी के साथ अंटाक का विवाह अवश्य करा देगा । इस पर अंटाक ने सियार पर दया करके उसे छोड़ दिया ।

सियार वहाँ से सीधे नदी के उस पार राजा के महल में पहुँचा और उसने राजा से कहा—"महाराज, सुना है कि आपके यहाँ रत्नों को छानने वाली कोई छन्नी है । कुछ दिनों के लिए हमारे महाराज ने उसे मंगाया है । टोकरियाँ भर भर कर रत्न आए हैं । वे उन्हें छन्नी से छनवाकर टूटे रत्नों को फेंककर बढ़िया क़िस्म के रत्नों को राज कोष में रखना चाहते हैं ।"

राजा ने सियार को छन्नी दिला दी । सियार वह छन्नी लेकर चला गया । इसके बाद सियार ने उस छन्नी के छिद्रों में जहाँ तहाँ मानिक, लाल आदि छोटे छोटे रत्न चिपका दिए । फिर छन्नी ले जाकर राजा को सौंपते हुए उसने छन्नी को फ़र्श पर दे मारा । बस फिर भिन्न भिन्न रंगों के रत्नों के टुकड़ों को फ़र्श पर छितरे देख राजकुमारियाँ उन्हें चुनने के लिए दौड़ पड़ीं ।

"यदि आप को रत्न चाहिए थे तो पहले ही मुझे बता देते । मैं अपने राजा से कहकर ऊँटों पर लदवाकर ले आता ।" सियार ने कहा ।

राजा ने मन में अंटाक को अपना दामाद बनाने की इच्छा जागृत हो गई । राजा ने सियार से कहा—"रत्नों की बात छोड़ो, लेकिन, तुम मध्यस्थ बनकर अपने राजा को मेरी तीन राजकुमारियों में से अपनी पसंद की कन्या के साथ विवाह करने के लिए राज़ी करवा लो ।"

"देखिए महाराज, आप ज़ल्दबाजी न करें । क्योंकि वास्तव में मुझे यह नहीं मालूम कि हमारे राजा को फ़िलहाल विवाह करने की इच्छा है या नहीं । लेकिन मैं पता लगाकर आपको सूचित करूँगा ।" सियार ने कहा ।

इसके बाद वहाँ से लौटकर सियार ने अंटाक से कहा—"दोस्त, तुम्हारी क़िस्मत खुल गई । राजा अपनी कन्या का विवाह तुम्हारे साथ करने के लिए राजी हो गए हैं । चलो, अब तुम जल्दी

से विवाह के लिए तैयार हो जाओ ।"

अंटाक ने चिन्तित होकर कहा—"दोस्त, जानते हो ? राजा की बेटी से विवाह करने के लिए तो बहुत से धन की आवश्यकता होती है। साथ ही बड़ी तैयारी भी करनी होती है। लेकिन, तुम तो जानते ही हो, कि मेरे पास एक फूटी कौड़ी भी नहीं । समझ में नहीं आता कि मैं क्या करूँ ।"

बुद्धि से सारे काम किए जा सकते हैं। तुम इन्हीं वस्त्रों में विवाह के लिए मेरे साथ चलो, आगे का सारा काम मैं संभाल लूँगा ।" सियार ने समझाते हुए अंटाक से कहा ।

इसके बाद दोनों चलकर नदी के पास पहुँचे। सियार अंटाक से नदी में जाकर गले तक के पानी में खड़े होने को कहकर स्वयं नदी पार करके राजा के पास पहुँच कर राजा से बोला—"महाराज, हमारे राजा, रत्नों से लदे चालीस ऊँटों के साथ आपकी कन्या से विवाह करने के लिए इधर चले आ रहे थे, कि तभी नदी में ज़ोरों की बाढ़ आ गई और सारे ऊँट उसमें बह गए। उनका सारा परिवार, उनके मित्र, बराती, और यहाँ तक कि स्वयं महाराज के अपने वस्त्र भी उस बाढ में बह गए। मेरी समझ में नहीं आता कि इस हालत में हम क्या करें ?"

"होनी को भला कौन टाल सकता है ?" ऐसा कहकर राजा अपने होनेवाले दामाद के लिए राजोचित वस्त्र और आभूषण लेकर परिवार के साथ नदी के तट पर पहुँचे ।

अंटाक अपने होने वाले ससुर द्वारा दिए गए राजोचित वस्त्र एवं आभूषणों को धारण करके उनके साथ राजमहल में पहुँचा ।

वहाँ पहुँचकर अंटाक का विवाह राजा की तीसरी कन्या के साथ वैभवपूर्ण ढंग से धूम धाम के साथ संपन्न हो गया । विवाह के सारे रस्मों-रिवाज़, प्रीति-भोज और नाच-गाना समाप्त होने पर अंटाक ने बहुत चिंतित होकर सियार को बुलाकर कहा—"मेरे प्यारे दोस्त, अब तक का सारा कार्य बड़े अच्छे ढंग से संपन्न हो गया। किन्तु जब, मैं अपनी पत्नी को लेकर अपने घर जाऊँगा तो हमारी सारी पोल खुल जाएगी। समझ में नहीं आता कि अब मैं क्या करूँ ।"

"तब की बात तब देखी जाएगी।" सियार ने

जवाब दिया। अंटाक के कुछ दिन बड़े सुख एवं खुशी के साथ ससुर के यहाँ बीते। एक दिन राजा ने शुभ मुहूर्त देखकर अपनी कन्या व दामाद को राजोचित दान-दहेज देकर विदा कर दिया।

सियार सबसे पहले दौड़ कर आगे आगे चला। रास्ते में उसने ऊँटों के व्यापारियों को देखा

सियार ने उस दल के मालिक से कहा—"महाशय, लगता है आज किसी बुरे मुहूर्त में घर से निकले हैं। क्योंकि उधर सामने से एक डाकुओं का गिरोह चला आ रहा है। जो आपकी सारी संपत्ति लूट कर ले जाएँगे, एवं आप सबको वे मार भी डालेंगे।"

ऊँट के व्यापारी दल के मालिक ने उस दिशा में अपनी दृष्टि घुमाई जिस ओर से सियार आ रहा था। उस ओर हवा में धूल उड़ते देख घबराकर सियार से बोला—"मित्र, हमें तो समझ में नहीं आता कि इस समय हम क्या करें। अब तुम्हीं कोई उपाय सोचकर हमारे प्राणों की रक्षा करो।"

"ठीक है, आप लोग एक काम कीजिए, जब वे लोग आप से पूछें कि यह दल किसका है, तो आप लोग उनसे कहिएगा कि यह दल महाराजा अंटाक का है। फिर वे लोग आपको कोई हानि नहीं पहुँचाएँगे और अपने रास्ते चले जाएँगे।" सियार ने समझाते हुए कहा।

इसके बाद सियार आगे बढ़ गया। थोड़ी देर बाद राजकुमारी के साथ आनेवाले लोगों का दल उधर से गुज़रा। उन लोगों ने व्यापारी दल के मालिक से पूछा—"महाशय यह दल किसका है?"

उन्होंने झट उत्तर दिया—"यह तो महाराजा अंटाक का दल है।"

इस बात को सुनकर राजकुमारी के साथ आनेवाले बड़े प्रसन्न हुए।

इधर सियार ने आगे जाकर सामने से आनेवाले घोड़ों के मालिक एवं भेड़ के झुंड के मालिक को भी इसी प्रकार से कहने के लिए बताया। राजाकुमारी के दलवालों ने इनसे भी यही सवाल किया। और इन लोगों ने भी उनको यही उत्तर दिया कि—"हमारा दल महाराज अंटाक का है।"

अंत में सियार एक राक्षस के क़िले की ओर दौड़ा। उसको इस प्रकार दौड़ कर आता देख,

राक्षसराज ने उससे पूछा—"क्या बात है भाई, तुम इस प्रकार हाँफते हुए भागे जा रहे हो ?"

"क्या कहूँ राक्षसराज; बड़ी भारी आफ़त आ गई है। डाकुओं का गिरोह लोगों का पीछा कर रहा है, लोग अपनी जान बचाने के लिए भाग रहे हैं। जान है तो जहान है। हज़ारों की तादाद में लोग आ रहे हैं। तुम उन्हें कहाँ तक रोक सकोगे ? अपने प्राण बचाओ।" सियार ने कहा।

राक्षसराज ने घबराकर पूछा—"मैं इस समय कहाँ जाऊँ ? कैसे अपने प्राणों की रक्षा करूँ ?"

"देखो, तुम उस गहरे गढ्ढेवाले चूल्हे में छिपकर लेट जाओ। मैं लकड़ियाँ बिछाकर उस गढ्ढे को ढंक देता हूँ। जब डाकू चले जाएँ तब तुम बाहर आना।" सियार ने उपाय बताया।

राक्षसराज इस उपाय को सुनकर बहुत खुश हुआ। और वह उस गढ्ढेवाले चूल्हे में छिप कर लेट गया। उसके ऊपर लकड़ियाँ बिछाकर सियार ने उसमें आग लगा दी। राक्षस वहीं जल कर भस्म हो गया। सियार अब राजकुमारी के परिवार के समीप पहुँचकर उन्हें रास्ता दिखाते हुए क़िले के अन्दर ले गया।

उस किले को देखकर राजकुमारी व उसके परिवार के लोग यह समझ कर बहुत खुश हुए कि यह महाराजा अंटाक का किला है।

इसके पश्चात अंटक अपनी पत्नी व परिवार के साथ उस क़िले में सुखपूर्वक रहकर अपना जीवन बिताने लगा। वह सियार भी उनके साथ ही रहने लगा।

एक दिन सियार ने अंटाक के पास जाकर पूछा—"देखो, मैंने तुम्हारा इतना उपकार किया है। लेकिन मेरे मर जाने पर तुम मेरा क्या करोगे ?"

"मैं तुम्हें अपने सिर पर धारण करूँगा।" अंटाक ने जवाब दिया।

कुछ दिन बाद सियार मर गया। फिर अंटाक ने सियार को दिए गए वचन के अनुसार उसके चमड़े से टोपी बनवाकर अपने सिर पर धारण कर ली। कहते हैं उस प्रदेश में आज भी यह प्रथा चली आ रही है। वहाँ के लोग अपने सिर पर सियार के चमड़े से बनी टोपियाँ धारण करते हैं।

राजसम्मान

रामशास्त्री नामक एक कवि कुछ सामान ख़रीदने के लिए एक किराने की दूकान पर पहुँचा। उसी समय उस दूकान का मालिक अपने एक परिचित व्यक्ति को किसी संदर्भ में नीति-वाक्य का उपदेश दे रहा था। उन वाक्यों को सुनकर रामशास्त्री बहुत ही प्रसन्न हुआ।

उसी दिन रात को रामशास्त्री ने बड़ी निष्ठा के साथ बैठकर रमापति के नीति वाक्यों के आधार पर कुछ पद्यों की रचना की और सबेरा होते ही वह उन पद्यों को लेकर गाँव के ज़मींदार के घर गया और उन्हें पढ़कर सुनाया।

जमींदार ने रामशास्त्री के पद्यों को सुनकर उसकी बड़ी प्रशंसा की और पुरस्कार स्वरूप पचास स्वर्ण मुद्रायें एक थैली में रखकर उसे भेंट कर दीं।

रामशास्त्री उस पुरस्कार को लेकर सीधा रमापति की दूकान पर पहुँचा और बोला—"सुनो रमापति, जमींदार ने मेरे पांडित्य पर प्रसन्न होकर यह पुरस्कार मुझे प्रदान किया है।" यह कहकर उसने रमापति को स्वर्ण मुद्राओं से भरी वह थैली दिखाई।

"ओह, ऐसी बात है!" रमापति ने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा। रामशास्त्री ने मुस्कराकर उससे कहा—"लेकिन जानते हो तुम्हारे नीति वाक्य ही मेरे पद्यों के प्राण हैं।"

रामशास्त्री की प्रशंसापूर्ण बातें सुनकर रमापति गर्व से फूला न समाया और उसको आदर के साथ बैठाते हुए कहा—"शास्त्रीजी, यदि आप धैर्यपूर्वक लिखने के लिए तैयार हों तो मैं आपको अनेकों अद्भुत बातें सुना सकता हूँ। मेरे पास तरह तरह की कल्पनाओं का भंडार पडा है। तुम उन सब का उपयोग करके खूब पद्यों की रचना कर सकते हो।"

उस दिन से रामशास्त्री नियमित रूप से प्रतिदिन रमापति की दूकान पर किसी न किसी

समय ज़रूर हो आता ।

एक दिन रमापति ने रामशास्त्री को पक्षी तथा उनकी मूक भाषा पर अनेकों रोचक बातें सुनाईं । रामशास्त्री ने उनका सारांश लेकर कुछ कविताएँ रचीं और पड़ोस के गाँव के ज़मींदार को सुनाईं । उस ज़मींदार ने भी बहुत आनंदित होकर रामशास्त्री को सौ स्वर्ण मुद्राएँ पुरस्कार में दीं ।

यह समाचार सुनकर रमापति ने अपने मन में सोचा कि मेरे अन्दर राख से ढकी अग्नि जैसी प्रतिभा विद्यमान है । मैं उसका उपयोग करूँ तो खूब अनमोल रत्नों को पैदा कर सकता हूँ । मुझे इसी दिशा में प्रयत्नशील रहना चाहिए ।

इस विचार के आते ही वह अहंकार से भर उठा । रामशास्त्री रोज रमापति के मुँह से अनगिनत बातें सुनता; लेकिन उनमें से अपनी पसंद की कुछ थोड़ी सी बातें लेकर उनसे कविताओं की रचना करता । अपनी नई नई रचनाओं को पढ़कर वह मन-ही-मन बहुत संतुष्ट होता ।

एक दिन रमापति ने देश की शासन पद्धति पर देर तक बातें कीं । रामशास्त्री ने उनका सारांश ग्रहण करके खूब मेहनत के साथ कुछ कविताएँ रचीं । वे कविताएँ रत्नों के समान थीं ।

रामशास्त्री ने मन में सोचा कि राजधानी पहुँचकर राजा को ये कविताएँ सुनानी चाहिए । दूसरे दिन रामशास्त्री ने राजधानी में पहुँचकर अपनी कविताएँ राजा को सुनाईं । राजा को वे कविताएँ इतनी पसंद आईं कि उन्होंने उन कविताओं को कई बार सुना और बहुत प्रसन्न हुए ।

अंत में राजा ने रामशास्त्री से कहा—''कवि महोदय आप चार दिन के लिए हमारा आतिथ्य ग्रहण कीजिए, इसके बाद मैं आपका राज दरबार में सम्मान करूँगा ।''

रामशास्त्री के सम्मान का समाचार सुनकर रमापति उसी समय राजधानी के लिए चल पड़ा ।

राजा ने पाँचवें दिन रामशास्त्री को बुलाकर अपनी कविताएँ राजदरबार में सुनाने का अनुरोध किया । रामशास्त्री ने बड़े ही मधुर कंठ से अपनी कविताएँ वहाँ गाकर सुनाईं । सभा में बैठे सभी सभासदों ने हर्षनाद करके अपनी खुशी ज़ाहिर की ।

राजा ने रामशास्त्री के पांडित्य की भूरी भूरी प्रशंसा करते हुए उसके गले में पुष्पहार पहनाकर एक हज़ार स्वर्ण मुद्राएँ पुरस्कार स्वरूप भेंट कीं । उसी सभा में उपस्थित रमापति के मन में रामशास्त्री के प्रति अपार ईर्ष्या पैदा हो गई ।

उसने खड़े होकर कहा—''महाराज, आज जो रामशास्त्री का अपूर्व सत्कार हुआ और उनको जो पुरस्कार मिला है उसका आधा हिस्सा मुझे भी मिलना चाहिए । रामशास्त्री, मेरे ही गाँव के निवासी हैं ।'' यह कहकर उसने शुरू से लेकर अब तक सारा वृत्तान्त राजा को सुनाया । सारा वृत्तान्त सुनने के बाद राजा ने मुस्कराते हुए अपने एक सिपाही से गन्ना मँगवाकर रमापति को देते हुए पूछा—''क्या तुम बता सकते हो कि इस गन्ने से कितना गुड़ बनाया जा सकता है ।''

''महाराज, उस प्रश्न का उत्तर मैं तो क्या, कोई भी नहीं दे सकता । उस गन्ने को कोल्हू में डालकर, रस निकालने के बाद की यह जाना जा सकता है कि इससे कितना गुड़ बन सकता है ।''

इस पर राजा ने रमापति को समझाते हुए कहा—''देखो, तुमने जो बातें रामशास्त्री को सुनाई थीं, वे इस गन्ने जैसी हैं । शास्त्रीजी ने अपने पांडित्य के बल पर उन बातों को काव्य के लक्षणों से अलंकृत किया है ।''

रमापति अपनी ग़लती को समझकर, राजा तथा रामशास्त्री को प्रणाम करके राजसभा से निकल पड़ा ।

खतरा टला

नीलमणि नाम का एक धोबी राजमहल के कपड़े धोया करता था। रात के समय अच्छे अच्छे कपड़े पहनकर किसी बड़े आदमी की तरह वह शहर की गलियों में घूमा करता था। वहाँ के राजा की भी यह आदत थी कि, वह अपनी प्रजाके बारे में बारीकी से जानने के लिए रात में छद्मवेष में घूमता था। एक बार ऐसे ही घूमते हुए नगर-संचार करनेवाले राजा से धोबी की भेंट हुई।

मुनिवेषधारी राजा को देखकर नीलमणि ने गरजकर पूछा, "इस अर्धरात्रि के समय तुम कहाँ जा रहे हो?"

"बेटा, मैं सराय में जा रहा हूँ।" राजा ने बड़ी नम्रता से कहा।

"सराय में जा रहे हो या चोरी करने? मैं जानता हूँ कि तुम जैसे कपटवेषधारी मुनि चोरियाँ करते हैं। इसलिए मैं रातों में इस प्रकार संचार किया करता हूँ।" नीलमणि ने कहा।

"क्षमा करो, मैं तुम्हें पहचान नहीं पाया।" राजा ने कहा।

"मैं इस देश का राजा हूँ।" मूँछों पर ताव देते नीलमणि बोल उठा।

"जो आज्ञा। मैं कल से रात में इस प्रकार बाहर नहीं निकलूँगा।" अपना उबलता हुआ क्रोध निगलते हुए राजा ने कहा और वहाँ से चलते बने।

मुनि की चाल देखकर नीलमणि ने भाँप लिया कि यह साधारण व्यक्ति नहीं, बल्कि खुद राजा हैं। उसका दिल कांप उठा। पर तत्काल उस के दिमाग में एक उपाय कौंध आया।

उसने विनम्र होकर कहा। "स्वामिन्, क्षमा करें। मैंने आप की तपस्या की शक्ति की परीक्षा करने के ख्याल से ऐसा कहा। वास्तव में मैं राजा का धोबी हूँ। आपने ज़रूर अपनी दिव्य दृष्टि से मुझे पहचान लिया है। इस मूर्ख को क्षमा कर दीजिए।" ये शब्द कहकर नीलमणि राजा के पैरों पर गिर पड़ा।

नीलमणि की समयसूचकता देख राजा का क्रोध शान्त हो गया। वे हँस पड़े और उस को क्षमा करके आगे बढ़े। इस के बाद धोबी ने भेंस बदलकर घूमना बंद कर दिया।

शब्दों की मार

गोविन्दपुर के ज़मींदार ज्वालाप्रसाद एक दिन शाम को गाँव के बाहर सैर करने निकले। लौटते वक्त रास्ते में उन्होंने फलों से लदी एक अमराई देखी।

गदराये आम्र-वृक्षों को देखकर ज़मींदार बहुत खुश हुए। प्रकुति का वह करिश्मा देखते ही बनता!

ज़मींदार आश्चर्य में आकर उस बगीचे को देखते ही खड़े रह गये। यह देखकर उनके दिवान दिवाकर राय ने ज़मींदार से कहा, "सरकार, लगता है, आप कभी इस ओर नहीं पधारे दरअसल यह बाग तो आप ही का है।"

"ओह, ऐसी बात है!" यह कहकर ज़मींदार ने सिर हिलाया। फिर पूछा, "आजकल के दिनों में पहरा बिठाने पर भी बागों में चोरियाँ होती रहती हैं; ऐसी हालतमें आपने इस बगीचे में पहरेदार क्यों नहीं रखा? तुरंत यहा भी पहरे का इंतज़ाम कीजिए।" कहने हुए ज़मींदार दिवान पर बरस पड़ा।

"प्रभु, बगीचे के पहरे का पक्का इंतज़ाम किया हुआ है। दामोदर नामक व्यक्ति यहाँ का पहरेदार है। मैं बहुत समय से उसको अच्छी तरह से जानता हूँ।

वह अपना काम बहुत ही सावधानी से करता है। उसके होते हुए क्या मज़ाल है कि कोई फलों की चोरी करे।

इस वक्त शायद वह किसी कामवश गाँव में चला गया है।" दिवान ने बड़ी नम्रता से कथन किया।

उसी समय बगीचे के एक पेड़ की छाया में बैठी एक बूढ़ी औरत को दिवान ने देखा।

उसकी ओर इशारा करते हुए दिवान ने कहा, "यह बूढ़ी दामोदर की माँ है। जब तक यह बूढ़ी बगीचे में रहेगी, तब तक कोई भी इन में से किसी

गौरी शंकर मिश्रा

पेड़ का एक फल भी तोड़ने की हिम्मत नहीं कर सकता ।''

विस्मय में आकर ज़मींदार ने पूछा, "यह बूढ़ी तो उठ खड़ी होने की भी शक्ति नहीं रखती। ऐसी हालत में आम के बगीचे का पहरा वह कैसे दे सकती है भला? कोई चोर अगर बगीचे में घुसकर आम तोड़ता रहेगा तो चल-फिर न सकनेवाली बूढ़ी क्या कर सकती है? उससे कोई चोर क्या डरेगा? चोर अपना काम करता रहे, बुढ़िया अपनी जगह पर बैठी है । बस!''

इसपर दिवान ने कहा, "सरकार, चोर-डाकू और नटखट लोगों को भगाने के लिए हमेशा केवल शारीरिक बल ही पर्याप्त नहीं होता; बल्कि कभी कभी किसी संदर्भ में बात की चोट भी कारगर सिद्ध होती है। शारीरिक मार से शब्दों की मार ज्यादा प्रभावी होती है । गाँव के लोग अक्सर कहते हैं कि यह बूढ़ी बड़ी चतुर और झगड़ालू है । इसने बात की चोट से अनेक बार लोगों को घबरा दिया है और भयकंपित कर दिया है ।

ये बातें सुनकर ज़मींदार और ही विस्मय में आ गये । उन्होंने आव्हान दिया, "तो हम ही बगीचे में घुसकर खुद आम तोड़ने की कोशिश करेंगे । तब जाकर पता चलेगा कि यह बूढ़ी हम को कैसे रोक सकती है ।''

ज़मींदार और दिवान दोनों बगीचे में घुसकर एक पेड़ के नीचे खड़े हो गये । बूढ़ी ने भाँप लिया कि कोई पराये लोग बगीचे में घुस आये हैं । धीरे-धीरे कदम बढ़ाते वह उन दोनों के समीप पहुँच गयी ।

ज़मींदार अपने निकट की शाखासे आम तोड़ने की सोच रहा था, तभी वहाँ घास चरनेवाले
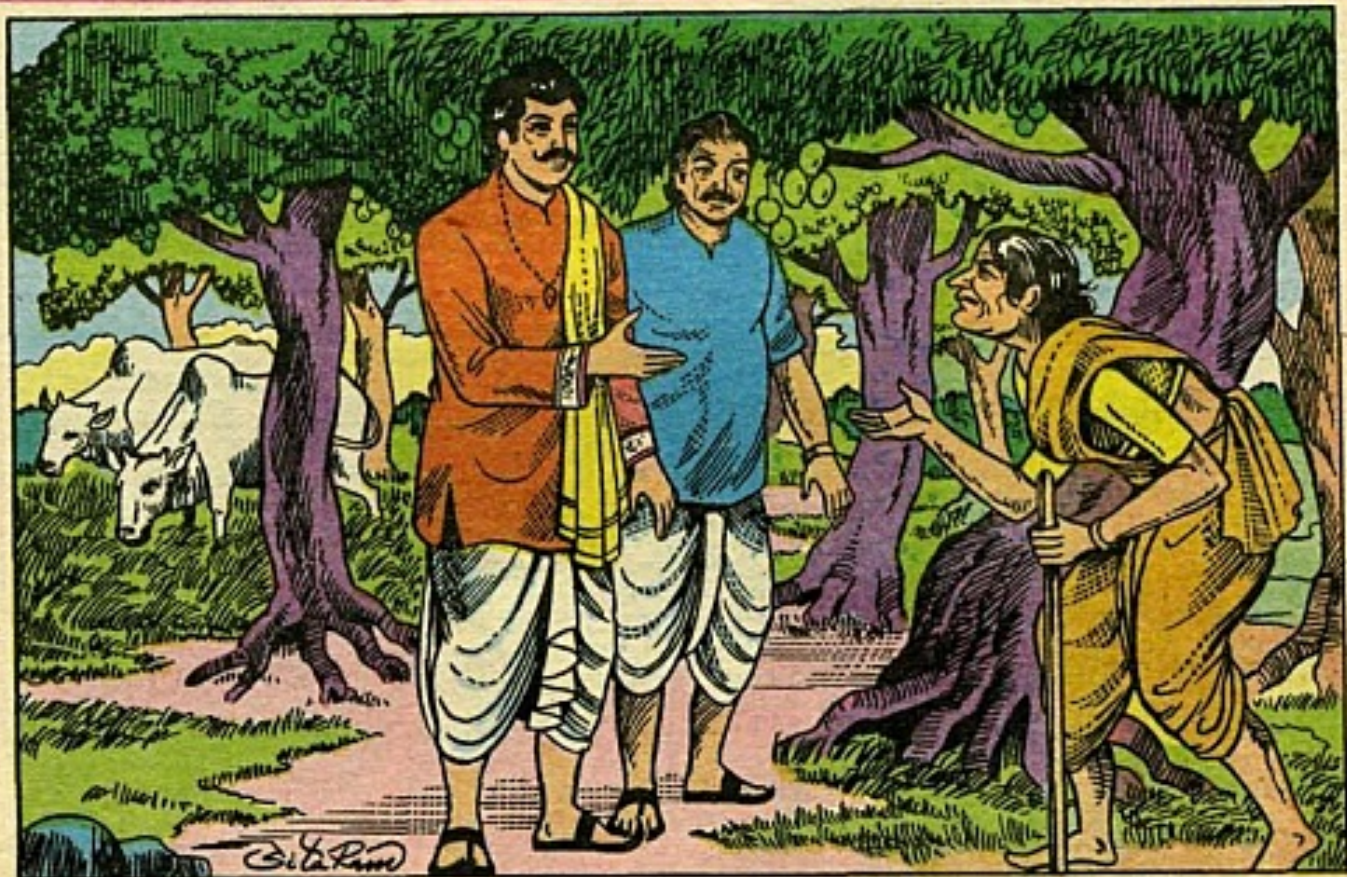
दो बछड़े उसको दिखाई दिये। इसपर ज़मींदार ने आगे बढ़ने की हिम्मत नहीं की और उसने बूढ़ी से पूछा, "नानीजी, ये बछड़े सींग मारनेवाले तो नहीं हैं न?" बूढ़ी की आँखें वैसे भी कमज़ोर बन चुकी थी, अतः वह उसे पहचान नहीं सकी। क्रोधभरे स्वर में उसने उत्तर दिया, "मैं जानती हूँ, तुम लोग किस कामसे आये हो। बछड़े सींग मारेंगे की नहीं यह मैं नहीं कह सकती। मगर इतना जानती हूँ कि ये अपनी ज़मीन का घास मात्र चरते हैं; पराये लोगों की ज़मीन में घुसकर नहीं चरते।"

बूढ़ी की बातों का व्यंग्य ज़मींदार के दिलपर चोट कर गया। वह झट घुस पड़ा और उसने बगीचे के बाहर निकलने का रास्ता पकड़ा। संतुष्टिपूर्वक सिर हिलाकर दिवान ने भी उसका अनुसरण किया।

बूढ़ी उनकी ओर देखते अपने आपसे कुछ बड़बड़ाते थोड़ी देर खड़ी रही और फिर छाया में जाकर पेड़ तले बैठ गयी।

बगीचे से बाहर निकलने पर दिवान ने ज़मींदार से कहा, "सरकार, देख लिया न? समझदार व्यक्ति के लिए 'शब्दों की मार' सहना कैसा दुखदायक है।"

ज़मींदार ने स्वीकृतिसूचक सिर हिलाया।

वे दोनों बगीचे से निकलकर पगडंड़ी के पास पहुँच ही रहे थे, इतने में गाँव से लौटनेवाले दामोदर को उन्होंने देखा। इन दोनों को देखने पर रुककर उसने बड़ी नम्रता से झुककर प्रणाम किया।

ज़मींदार ने दिवान से पूछा, "क्या यही हमारे बगीचे का पहरेदार दामोदर है?"

"जी हाँ, प्रभु!" दिवान ने हामी भर दी।

दामोदर की ओर प्रशंसा भरी नज़रों से देखते हुए सिर हिलाकर ज़मींदार बोल उठा, "अरे दामोदर, तुम्हारे हाथ की लाठी की मार से भी तुम्हारी माँ की शब्दों की मार कहीं ज़्यादा असरदार है। लो, मेरी तरफ से यह पुरस्कार तुम्हारी माँ को दे दो।" यूँ कहते हुए ज़मींदार ने अपनी ज़ेब से दस रुपये का नोट निकालकर दामोदर के हाथ में थमा दिया।

नागफणी की जाति में सबसे अधिक ऊँचा बढ़नेवाला शाग्वोरो जाति का पौधा है। यह पौधा २०० साल की अवधि में ४०-५० फूट की ऊँचाई तक बढ़ता है। इसका वज़न लगभग दस टन तक होता है। लेकिन अपने वज़न के १/४ हिस्सा पानी उस में रहता है।

अग्निपर्वत के भीतर अग्निपर्वत

अमेरिका के ओरिगान ज्वालामुखी का अंश वास्तव में केवल प्रागैतिहासिक ज्वालामुखी का अवशेष मात्र है। दस कि.मी. चौड़े इस ज्वालामुखी के मध्य में एक और अग्निपर्वत निहित है।

प्राण हरनेवाला कुकुरमुत्ता

साधारण कुकुरमुत्ते जैसा दीखनेवाला 'डेथ कैप' (अमानिटा फ़्लाइड्स्) नामक एक कुकुरमुत्ता अत्यन्त ज़हरीला होता है। इसको खानेवाले लोग हैज़े आदि बीमारियों के शिकार हो जाते हैं।

मनोरंजक एवं ज्ञानवर्द्धक उत्कृष्ट मासिक पत्र

* चन्दामामा हमारे पुराण व साहित्य के श्रेष्ठ रत्नों को क्रमबद्ध रूप में प्रदान करता है ।
* व्यापक दृष्टिकोण को लेकर विश्व साहित्य की अद्भुत काव्य कथाओं को सरल भाषा में प्रस्तुत करता है ।
* मृदुहास्य, ज्ञानवर्द्धक तथा मनोरंजक सुन्दर कहानियों द्वारा पाठकों को आकृष्ट करता है ।
* हमारी पुराण गाथाओं को प्रामाणिक रूप में परिचय करता है ।
* हास्यपूर्ण प्रसंगों तथा व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करने वाले शीर्षकों के साथ पाठकों का उत्साह वर्द्धन करता है ।
* चन्दामामा केवल आपके जीवन में ही नहीं बल्कि आपके बन्धु एवं मित्रों के जीवन में भी रचनात्मक पात्र का व्यवहार करता है । इसलिए आप अपने घनिष्ट मित्रों को चन्दामामा भेंट कीजिए ! उपहार में दीजिए !

बच्चों के लिए प्रस्तुत चन्दामामा, पाठकों में नवयौवन का उत्साह एवं आनन्द प्रदान करता है ।

तेरह भाषाओं में प्रकाशित चन्दामामा का साप किसी भी भाषा का ग्राहक बन सकते हैं !

तेलुगु, तमिल, हिन्दी, अंग्रेज़ी, असामी, बंगाली, गुजराती, कन्नड, मलयालम, मराठी, उडिया, पंजाबी और संस्कृत ।

वार्षिक चन्दा: रु. ३०-००

आप किस भाषा का चन्दामामा चाहते हैं, इसका उल्लेख करते हुए निम्न लिखित पते पर अपना चन्दा भेजिए:

डाल्टन एजेन्सीस

चन्दामामा बिल्डिंग्स,

वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६.

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ मई १९८८ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।
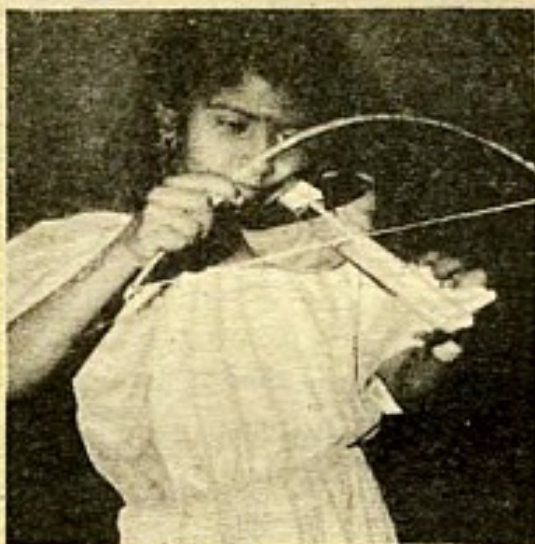
M. Natarajan

Chaitanya Munshi

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ मार्च १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: **चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

जनवरी के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : पानी की धार!

द्वितीय फोटो : ढेर सारा प्यार!!

प्रेषक : **राजकुमार जैन**, डी. २७६, डी.आर.डी.ओ. टाउन शिप, बेंगलूर - ५६० ०९३

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु. ३०-००

चन्दा भेजने का पता :

डॉल्टन एजेन्सीस, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

अन्य देशों के चन्दे सम्बन्धी विवरण के लिए निम्न पते पर लिखिये :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

Statement about ownership of CHANDAMAMA (Hindi)
Rule 8 (Form VI), Newspapers (Central) Rules, 1956

1. Place of Publication	'CHANDAMAMA BUILDINGS' 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
2. Periodicity of Publication	MONTHLY 1st of each calendar month
3. Printer's Name	B.V. REDDI
Nationality	INDIAN
Address	Prasad Process Private Limited 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
4. Publisher's Name	B. VISWANATHA REDDI
Nationality	INDIAN
Address	Chandamama Publications 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
5. Editor's Name	B. NAGI REDDI
Nationality	INDIAN
Address	'Chandamama Buildings' 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
6. Name and Address of individuals who own the paper	CHANDAMAMA PUBLICATIONS PARTNERS: 1. B. VENKATRAMA REDDY 2. B.V. SANJAY REDDY 3. B.V. NARESH REDDY 4. B. PADMAVATHI 5. B. VASUNDHARA 6. B.V. SHARATH REDDY 7. B.N. RAJESH 8. B.L. ARCHANA (Minor) 9. B.L. ARADHANA (Minor) (Minors admitted to the benefits of Partnership)

I, B. Viswanatha Reddi, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

B. VISWANATHA REDDI
Signature of the Publisher

1st March 1988

पारले
राम और श्याम से विचित्र प्राणी की मुलाकात
राम और श्याम अकेले और अनजान समुद्र का किनारा, अचानक चमके उस आसमान में जगमग सितारा.
उज्ज्वल आसमान से उतर रहा था एक भीमकाय चमकता गोला...
अरे, यह तो उड़न तश्तरी लगती है.
करीब पहुँचते ही तश्तरी उड़न छू हुई. मगर झाड़ियों से अजीब सी आवाज़ आयी.
राम और श्याम हुए चकित !
ये प्राणी तो विचित्र लगता है.
शायद हमसे डरता है.
हम इसे अपना लेंगे.
इसे पी.पी. कहकर बुलाएंगे, पॉपिन्स दे कर दोस्त बनाएंगे.
राम और श्याम को प्राणी से लगता था डर. उसके सामने रखीं पॉपिन्स और देखने लगे असर.
रंग-बिरंगी पॉपिन्स ने पी.पी. का मन ललचाया, पॉपिन्स का स्वाद उसे खूब भाया.
देखते-देखते ही पी.पी. ने दोस्ती का हाथ बढ़ाया राम और श्याम को ये देख बड़ा मज़ा आया.
वाह! पी.पी. ! वाह! पारले पॉपिन्स!
पॉपिन्स !
रसीली. प्यारी. मज़ेदार
पारले पॉपिन्स
PARLE
POPPINS
everest/86/PP/412-hn